छोटे कदम : लंबी राहें

हरिदर्शन सहगल

नेगचार प्रकाशन, बीकानेर

क्रम

मोटा ढाबेवाला

पारस अपने कमरे मे बैठा था। सामने मेज पर उसकी कापी और किताबे फैली थीं। वह जल्दी से सब कुछ रट लेना चाहता था। पर कुछ याद ही नहीं हो पा रहा था।

बाहर बहुत शोर था।

कई रोज की भयंकर गर्मी के बाद आज ही तो बरसात हुई थी। सभी बच्चे खेल कूद में मस्त थे। उधम चौकडी मचाते हुए शायद एक दूसरे के पीछे भाग रहे थे।

पारस का दिल भी खेलने को मचल रहा था। परन्तु उसका सिद्धान्त था–'पहले काम फिर आराम।' वैसे तो पारस हमेशा स्कूल से लौटने के बाद, सबसे पहले कपडे बदलता है। हाथ मुँह धोता है। खाना खाता है। और स्कूल से मिला सारा काम निपटा देता है।

परन्तु आज तो बात ही कुछ दूसरी थी। पापा की तबीयत एकाएक बहुत खराब हो गई। उनकी कमर मे बेहद दर्द था। आते ही उसे डाक्टर माथुर को बुलाना पडा था।

डाक्टर साहब आये इन्जेक्शन लगाया। खाने को कुछ गोलियॉ और कैप्सूल, एक पर्चे पर लिखे। इन्हें लाने उसे फिर बाजार जाना पडा था। बाजार से आकर पारस ने पापा को दवाई खिलाई। बहुत देर तक उनकी कमर और हाथ-पांव दबाता रहा था। बीच में, बडी मुश्किल से मम्मी ने उसे जबरदस्ती खाना खिलाया था।

अब जाकर पापा को नींद आई थी। पारस ने कपडे बदले और पढने बैठ गया।

बाहर जोर से बरसात होने लगी थी।

बरसात के कम होते ही फिर से मोहल्ले के बच्चो का शोर होने लगा। पारस अपने को वश में किए पढाई मे ही लगा रहना चाहता था। इसलिए वह उठकर गली से लगने वाली सारी खिडकियॉ बंद करने लगा। किन्तु तभी बाहर से किसी बच्चे के जोर जोर से रोने की आवाज आने लगी। तब पारस अपने को रोक न सका। किसी का भी रोना पारस से सहा नहीं जाता।

बाहर आकर पारस ने देखा, एक गोरा सा साफ-सुथरी शक्ल का लडका रो रो कर चिल्लाए जा रहा था– "छोड दो मुझे। छोड दो मुझे। मैंने चोरी नहीं की। बस यही एक रोटी ली है। मेरी माँ भूखी है।"

लड़के के हाथ में रोटी का आधा-चौथाई टुकडा था। रोटी शायद लोगों की छीना झपटी के कारण टूट-फूट कर रह गई थी।

दो आदमी कस कर उस लडके को बांह और कंधों से पकडे थे। बाकी शरारती लड़के, रह रह कर, उछल उछल कर, लडके के सिर में हाथ जमा देते– चोर चोर कहते हुए हल्ला गुल्ला मचा रहे थे।

पारस से यह सब नहीं देखा जा रहा था। वह बडी सावधानी से आगे बढ़ा और उन आदमियों से बोला–"इस बेचारे को छोड दीजिए ना अंकल।"

"छोड दें ? "पलट कर एक आदमी ने उत्तर दिया–"चोर को छोड दें। अभी हम इसे पुलिस के हवाले करेगे।"

पुलिस का नाम सुन कर वह लडका दुगने वेग से गला फाड कर रोने लगा–"नहीं नहीं पुलिस को मत बुलाना। मेरी माँ बीमार है। भूखी है। मुझे आप चाहे जितना मार लो। पर मुझे छोड दो।"

पारस ने भीगे हुए स्वर में फिर उस आदमी से कहा–"एक रोटी ही तो ली है इसने। बहुत सजा मिल गई, अब छोड भी दीजिए ना अंकल।"

"सिर्फ रोटी ही नहीं। पांच रुपये भी इसने लिये हैं।" उस मोटे आदमी ने कहा। वह मोटा आदमी एक ढावे वाला था।

"मैंने पांच रुपये नहीं लिये। बेशक मेरी तलाशी ले लीजिए।" लडके ने गिडगिडाते हुए कहा।

"चिथडों की क्या तलाशी लें।" ढाबे वाले ने कहा–"अपने किसी साथी को पकडा दिए होगे। या किसी खास जगह गिरा कर छुपा दिए होंगे इस. ..." ढाबे वाले ने गाली दी।

"गाली मत दीजिए" पारस थोडे गुस्से से बोला–"ठहरिए आपके पांच रुपये मैं ला देता हूँ।"

पारस घर की तरफ भागा। अपने जेब खर्च से बचाए पाच रुपये लाकर उस मोटे ढाबे वाले को दे दिए।

लेकिन फिर भी मोटे ढाबे वाले ने उस लडके को छोडा नहीं। कहने लगा–"ठीक है, पुलिस मे नहीं देता। फिर भी इसे कुछ सजा तो

मिलनी ही चाहिए। मेरा नौकर आज आया नहीं है। आज इस से सारे बर्तन मंजवाऊंगा। कल इसको छोड दूंगा।"

"मुझे नौकर ही रख लीजिए ना सेठ जी।" लडके ने आशा के साथ कहा।

"चोर। चोरों को कौन नौकर रखता है।" ढाबे वाले ने कहा और उस लडके की बॉह पकड कर उसे अपने साथ ले चला।

पारस ने चलते चलते उस लडके को अपने घर का पता बताया और कहा– "कल मेरे घर आ जाना। तुम्हारे लिए कोई काम देखूंगा।"

और कोई दिन होता तो पारस यह पूरी घटना अपने मम्मी-पापा से कह कर अपना मन हल्का कर सकता था; और उनसे कुछ सहायता भी लेता। परन्तु पापा तो पहले ही बीमार थे। रह रह कर दर्द के मारे कराह रहे थे। इस से मम्मी भी बहुत परेशान हो रही थी।

अन्दर से परेशान तो पारस भी बहुत था। किन्तु बाहर कुछ भी प्रकट होने नहीं दिया।

पारस के सर का नाम कौशल यादव था। वे हमेशा उसे यही शिक्षा दिया करते थे कि अच्छे बच्चे सभी प्रकार की बुराइयों का विरोध करते हैं। अपना साहस एवं संयम कभी नहीं खोते। गरीबों तथा असहायों की सहायता करते हैं।

अब उसे क्या करना चाहिए ? इन्हीं विचारों से पारस सारी रात ठीक से सो न सका। रह रह कर उस गोरे नाटे कद वाले बच्चे का चेहरा, पारस की ऑखो के सामने घूम जाता। उस बेचारे की मॉ बीमार थी। भूखी थी। फिर भी उस मोटे ढाबे वाले को जरा भी दया नहीं आई। पांच रुपये ले लेने के बाद भी उसे नहीं छोडा।

क्या पता वह लडका किस हाल में होगा। क्या अब तक वहॉ के ढेरो बर्तन मांज रहा होगा। क्या उसे खाने को रोटी भी मिली होगी या नहीं। लडका कितना दीन और असहाय दीख रहा था। बार बार कह रहा था कि उसने चोरी नहीं की। उसकी माँ भूखी है। बीमार है....

पारस ने अपने भावुक विचारों पर रोक लगाने की चेष्टा की। ऐसा तो सभी करते हैं। पकडे जाने पर एकदम ईमानदार गरीब होने का नाटक करने लगते हैं ताकि देखने वालों को दया आ जाए और वे उन्हे छोड दे। चलो कल सच्चाई का पता चल जाएगा। मैंने कल उसे बुलाया तो है। सब कुछ ठीक पता लगा लूंगा। अगर वह लड़का ठीक

हुआ तो मम्मी पापा से कहकर उसे अपने यहाँ अथवा कहीं काम दिलवा दूगा। और उसे पढाया करूंगा।

⊛⊛

दो पुराने मित्र

इन्हीं विचारों के जंगल मे भटकते भटकते, पारस को न जाने कब नींद आ गई, उसे पता नहीं चला। सुवह कुछ देरी से उठा। पापा का हाल पूछा जो अव कुछ बेहतर थे। फिर जल्दी जल्दी तैयार हो कर पारस स्कूल चला गया।

स्कूल मे, पारस अपने अध्यापकों को अच्छा 'होम वर्क' नहीं दिखला सका। अध्यापकों ने भी पारस से ज्यादा कुछ नहीं कहा। सोचा, ऐसे होशियार लडके से क्या कहें कोई खास कारण रहा होगा।

पारस घर पहुँचा तो सब से पहले मम्मी से यही प्रश्न किया–"क्या मुझे कोई लडका पूछने आया था ?"

मम्मी ने उत्तर दिया–"नहीं तो। भला स्कूल के समय कौन आने लगा। सभी को तो पता है। इस समय तुम स्कूल मे होते हो। और दूसरे लडके भी तो स्कूल में होते हैं।"

पारस चुप रह गया। जल्दी से कपडे बदले। खाना खाया। पापा के पांव दबाए। फिर अपना होमवर्क ले कर बैठ गया। इन सभी कामों मे भी उसका ध्यान वार वार दरवाजे की ओर लगा रहा। दरवाजे की हर आहट पर उसका मन चौंकता रहा। शाम हो गई अंधेरा भी होने लगा। मगर वह लडका नहीं आया। पारस का मन उदास उदास सा होने लगा। लडका आ जाता तो सारी बातें स्पष्ट हो जाती। आखिर आया क्यों नहीं वह लडका ? पारस ने मन ही मन कहा– मैं उसके बारे में फालतू में इतनी चिन्ता क्यों कर रहा हूँ। अरे मैंने तो उसका नाम तक भी नहीं पूछा था। वक्त ही कहां था, हालचाल नाम-वाम पूछने का। हो सकता है उसने मेरे पास आने की जरूरत नहीं समझी हो। और यह भी तो हो सकता है कि मोटे ढाबे वाले ने उसे अपने यहाँ नौकर रख लिया हो। वह दुकान के काम में लगा हुआ हो।

यह दूसरा विचार आते ही पारस अपने कमरे मे चला गया। कपडे बदले। कंघी की। मम्मी से कहा–"थोडी दूर तक घूम कर आ रहा हूँ।"

पारस ने कहा– "इस समय वास्तव मे मैं कुछ नहीं कह सकता। परन्तु बार बार उसकी शक्ल और उसके शब्द मेरे दिमाग में घूम रहे हैं। मुझे वह कोई चोर उचक्का या बदमाश नहीं लगा था। इसीलिए बस थोडा पता लगाने जा रहा हूँ। वह मेरे पास आया क्यों नहीं। कहीं किसी मुसीबत में न फंस गया हो।"

"ऐसी बात है तो चलो मै भी तुम्हारे साथ चलता हूँ।" मंगत ने कहा और पारस के साथ चल दिया। थोडी देर में वे दोनों ढाबे पर पहुँचे। वहॉ कोई ज्यादा ग्राहक नही थे। इक्के दुक्के लोग बाहर बैंच पर बैठे थे या अन्दर लोहे की कुर्सियो पर बैठे खाना खा रहे थे।

इन दोनो मित्रो को अन्दर की ओर झांकते देख वहॉ काम करने वाले एक हट्टे-कट्टे आदमी ने जरा सख्ती से पूछा– "यहॉ खडे-खडे क्या देख रहे हो। कुछ खाना है तो अन्दर चल कर बैठ जाओ। कुछ पैसे- वैसे भी हैं जेब मे ?"

"मैं मालिक से मिलना चाहता हूँ।" पारस ने साफ आवाज मे कहा– "कल शाम उनके साथ जो लडका आया था वह कहॉ हैं ?"

यह सारी बात सुनता हुआ, मोटा ढाबे वाला जाने किधर से प्रकट हो आया। आग बबूला हो कर पारस की ओर घूरते हुए बोला– "तुम भी क्या उसी के साथी हो। गिरहकट, उठाईगीर।"

"जरा जबान संभाल कर बात कीजिए। क्या कह रहे हैं आप ?" पारस ने शात पर सधी हुई जबान से पूछा– "मैं जानना चाहता हूँ कि वह लडका कहॉ है, जिसे कल आप जबरदस्ती पकड कर अपने साथ ले गए थे।"

"खूब खूब" कहता हुआ मोटा ढाबे वाला हॅसने लगा- "बस यह पता करने आए थे ? जनाब, तो सुनो। ऐसे लडके कहीं रुकते हैं। रात यहीं बाहर सोने के लिए चारपाई दी थी। न जाने रात को किस वक्त वह, खुद तो भाग ही गया। साथ मे चारपाई और ले उडा। मै गरीब आदमी लुट गया।"

"हैं !" पारस के मुँह से अनायास ही निकला– "ऐसे कैसे हो सकता है ?"

"तो क्या मैं झूठ बोल रहा हूँ।" मोटा ढाबे वाला गरज कर बोला– "अब यहॉ से भागते नजर आओ। हां अगर कहीं वह भगोडा नजर आ जाए तो भगवान के वास्ते मुझे जरूर खबर कर देना।"

घटना कुछ अटक अटक कर सुनाई और यह भी बताया कि उसके पापा की तबीयत भी ठीक नहीं चल रही है। उन से कुछ भी नहीं कह पाता।

यादव सर ने पारस के सिर पर प्यार से हाथ फेरते हुए कहा– "जहाँ तक हम से बन पडेगा। हम तुम्हारी मदद करेंगे। परंतु यह है बहुत टेढी बात। बिना प्रमाण के तो हम क्या, पुलिस भी कुछ नहीं कर सकती। शक के आधार पर रिपोर्ट तो हो सकती है पर उसमें उलझनें बहुत हैं।"

"मेरा एक पुराना दोस्त है, मंगतराम। पहले इसी स्कूल में पढता था। उसने भी कुछ पता लगाने का वचन दिया है।" पारस ने बताया।

"ठीक है। यत्न सब ओर से ही होने चाहिए।" सर ने जरा रूक कर कहा– "मगर एक बात मैं तुम्हे और समझाना चाहूँगा। वह यह कि दुनिया मे बहुत तरह के अन्याय-अत्याचार होते हैं। हमारा काम उनको कम करने का होना चाहिए। यह नहीं कि सोच सोच कर हम अपना दिमाग ही खराब कर लें। फेल हो जाएँ। घर के काम न कर पाएं। हर वक्त बस यही सोचते रहे, और दूसरे कामो में पिछड जाएं। देखो पन्द्रह अगस्त आने को है। इस बार दूसरे कार्यक्रमों के साथ मंच पर तुम्हारा भाषण भी होगा। अभी से तैयारी में जुट जाओ।"

"जी सर।" पारस ने आज्ञाकारी छात्र की भांति सिर झुकाते हुए कहा।

"शाबाश। और इसके बाद कभी भी साथ के गांव मे सप्ताह भर के लिए एक शिविर लगाने का हमारा कार्यक्रम रहेगा। वहाँ श्रमदान तो होगा ही– गाव की सफाई और स्वास्थ्य के विषय में गांव वालों को समझाया जाएगा और साथ ही हर वर्ग के अनपढ लोगो को थोडा बहुत पढाया जाएगा। और कुछ नहीं तो गाव वालो के मन मे पढने की रुचि जगाई जाएगी।"

सब बातें समझ कर पारस घर वापस आ गया। और फिर से ठीक प्रकार पढने-लिखने में मन लगाने लगा। पन्द्रह अगस्त के भाषण की तैयारी भी करता रहा। वह शुरू से ही अखबार पढता आया है ताकि आसपास की तमाम सामाजिक-राजनैतिक बातो का उसे ठीक प्रकार का ज्ञान रहे। साथ ही घर के सारे कामो की देखभाल करता। पापा का ख्याल रखता और उनसे आजादी की लडाई, देश के बँटवारे आदि

के किस्से सुनता। पारस के पापा बहुत वडे दिल के तथा विचारशील व्यक्ति थे। इस प्रकार पारस बहुत तेजी से बहुत कुछ सीख रहा था। इस पर भी उस खोए हुए लडके का ध्यान अपने मन से नहीं निकाल पाता।

❀❀

खोज

कोई दस एक रोज के बाद की बात है। चांदनी रात थी। रात के आठ बजे थे। खाना खाने के बाद, पारस पढने की तैयारी कर रहा था। सहसा कॉल बैल बज उठी। माँ ने दरवाजा खोला। पारस को बुलाया– "देखो तुम्हारा कोई मित्र आया है।"

पारस दरवाजे पर आया तो देखा– मंगतराम खडा है। उसे मगतराम को देखकर बहुत खुशी हुई। हाथ मिलाते हुए बोला– "आओ अन्दर। मैं तो हर रोज तुम्हारी प्रतीक्षा करता हूँ।"

मगतराम ने बडे अपनेपन से पारस के दोनों कंधों को अपने हाथो से दबाया। कहा– "इस वक्त अन्दर नहीं। देखो कितना खूबसूरत चांद निकला हुआ है। बाहर सडक पर ही चहल-कदमी करते हुए बातें करेंगे।"

"ठीक है।" पारस ने कहा– "अभी माता जी से पूछ कर आता हूँ।"

थोडी देर में दोनों मित्र खुली सडक पर आ गए। मगत बोला– "पारस मिलना तो मै भी तुम्हे जल्दी चाहता था। एक तो मजदूर आदमी को समय नहीं मिलता, दूसरा, जब तक मुझे कोई ठीक जानकारी न मिले, आकर क्या करता।"

"कुछ पता चला ?" पारस ने बडी उत्सुकता से पूछा।

"कहाँ ?" मगतराम ने आह भरी।

"क्यों क्या रहा। कुछ पता नहीं चला ? पारस को जानने की उतावली थी।

"बस एक हल्का-सा सुराग हाथ आया।" मगत बताने लगा– "जिस आदमी का मैंने जिक्र किया था, उनका नाम समरेश बाबू है। सभी के काम आते हैं। मैंने भी उन्हे कहा था, बडे भैया आप हमारा काम भी करा दें। सारी घटना सुनकर बडे भैया बहुत भावुक हो उठे, बोले–

मगतराम तुम चिंता मत करो। मैं पूरी कोशिश करूंगा। ऐसे समाज कटको को तो सजा मिलनी चाहिए। अपने मित्र पारस से भी कहना– भगवान पर पूरा भरोसा रखें। मैं आप दोनो के साथ हूँ।"

तब एक दिन बडे भैया जानबूझ कर रात को बडी देर से ढाबे पर गए।

ढाबे वाले ने कहा– "अब तो खाना खत्म हो गया। इतनी देर से क्यों आए।"

बडे भैया हँसने लगे। बोले– "चाचा तेरे लिए तोहफा लाया हूँ। सब लोगों के बीच तो यह सब अच्छा नहीं लगता।"

"क्या है बताओ ?" ढाबे वाले ने पूछा।

बडे भैया ने झोले मे से हरे रंग की दारू की बोतल दिखाई और वापस झोले में खिसका दी। बोतल देख कर ढाबे वाले की बांछे खिल गई। बोला– "वाह खूब। अब मस्ती आएगी। चलो अन्दर तुम्हारे लिए ताजा खाना बनवाता हूँ।"

बडे भैया कभी शराब नहीं पीते। वह कहते हैं– "इससे बुरी चीज ससार में कोई नहीं है। इससे आदमी होश खो बैठता है। और बहकने लगता है। जो उसे नहीं कहना होता। कह जाता है।"

"यही हुआ। बडे भैया खुद तो शराब पीने का नाटक करते रहे। बस उसे खूब पिलाते चले गए। ढाबे वाला नशे में पूरी तरह चूर हो गया। तब बडे भैया ने, उस मोटे ढाबे वाले के पेट पर धोल जमाते हुए पूछा– "कहो चाचे, सुना है, आजकल खूब मजे मे हैं। बहुत आमदनी हो रही है, गुरु हमे भी कुछ सिखाओ ना ?"

"ढाबे वाला भारी आवाज में बोला– "तुम से नहीं होगा। तुम से कुछ नहीं होगा, छोटे मुन्ने।"

"बडे भैया ने बडे भोलेपन से पूछा– बताओ तो चाचे क्या नहीं कर सकता मैं। तुम हुक्म तो करो मेरे चाचे ?"

"क्या तुम जुआ खेलते हो ?" ढाबे वाले ने पूछा।

"हॉ हॉ।" बडे भैया ने जानकर उत्तर दिया।

"खेलते होंगे जरूर खेलते होगे। पर हमने तो कभी नहीं देखा। भई हमारी क्या पूछते हो। हम तो सब करते है। दूसरों का पैसा तक मार लेते हैं। इधर का माल उधर कर देते हैं। बच्चो को भी......."

बस अभी ढाबे वाला इतना ही बोल पाया था कि उसके दूसरे साथी ने आकर उसके मुँह पर हाथ रख दिया। वह बडे भैया से

बोला– "इन्हे ज्यादा परेशान न करो। इनकी तबीयत ठीक नहीं है। अब आप मेहरबानी करके अपने घर को जाओ।"

बडे भैया को अब बहुत अफसोस हो रहा था कि यदि वह कहीं से टेप रिकार्डर ले जा सकते तो ज्यादा बेहतर रहता।

"हूँ।" पारस सोच में पड गया।

मंगतराम ने कहा– "पारस तुम थोडी और प्रतीक्षा करो। बडे भैया ने और अधिक सहयोग करने का वचन दिया है। वैसे चाहो तो हम अभी पुलिस मे रिपोर्ट कर सकते हैं। पर ...." मंगतराम सोचने लगा।

"जहॉ इतनी प्रतीक्षा हुई वहॉ थोडी और सही।" पारस ने कहा– "हम पुलिस को ऐसा प्रमाण दे पाएं कि यह लोग बिल्कुल न छूट पाएं।

"ठीक है ...." मंगत ने इतना ही कहा था कि तभी उन्होने देखा– पीछे की तरफ से बहुत से लोग चले आ रहे हैं। निकट के बस अड्डे पर एक बस रुकी। सहसा मगतराम और पारस के कानों में भारी आवाज टकराई– "अबे छोकरो ! तुम लोग इस वक्त रात को यहॉ क्यो घूम रहे हो ?"

पारस और मगतराम ने घूम कर देखा। यह वही मोटा ढाबे वाला था। दोनो ने उसे संशय से देखा। उत्तर नहीं दिया।

ढाबे वाले ने धमकाते हुए कहा– "बोलते क्यों नहीं।"

"आप अपनी राह पकडे। हम घूम रहे हैं।" मंगतराम ने कहा।

ढाबे वाला बोला– "घूम रहे हो या आवारागर्दी कर रहे हो। मैं तुम दोनो को पहचानता हूँ। तुम्हीं दोनों तो थे जो एक रोज मुझसे लडने आए थे।"

पारस ने मंगतराम को कोहनी मारी और उसे आगे ले गया।

"फिर इस तरह से घूमते देखा तो पुलिस से पकडवा दूगा।" इतना कहते हुए ढाबे वाला एक रिक्शा पर जा बैठा।

पारस ने कहा– "देखा मगत भाई ! इसे कहते हैं चोर की दाढी मे तिनका। हम फालतू में क्यो भडकें।"

"हॉ पारस ! हमे अभी थोडा धैर्य तो रखना ही होगा।" मगतराम ने उत्तर दिया।

कुछ देर और इसी प्रकार की बातचीत के बाद दोनो मित्र जुदा हो गए।

❁❁

पन्द्रह अगस्त का अर्थ

हम को तो बस पढ़ना है।
पढना है बस पढना है।
पढकर पार उतरना है।
न तो किसी से झगडना है।
कलक्टर डाक्टर बनना है।
पढ़ कर पार उतरना है।

राम निगम ने जैसे ही अपना काव्य-पाठ समाप्त किया, पूरा पंडाल तालियों की गड़गडाहट से भर उठा। कई ऊँची-ऊँची आवाजें भी गूज उठीं– "वाह बहुत खूब। क्या कहने, राम निगम। क्या काव्य प्रतिभा पाई है।" इनमे ज्यादातर स्वर स्कूल अध्यापकों के थे।

आज पन्द्रह अगस्त का दिन था। सबसे पहले मुख्य अतिथि ने स्कूल के मैदान मे राष्ट्रीय ध्वज फहराया था। फिर कुछ लडको ने राष्ट्र भक्ति के गीत गाए थे।

प्रिसिपल साहब ने थोडे शब्दो में स्कूल की प्रगति की रिपोर्ट पढी थी। इस के बाद बारी बारी से उन लडकों को मंच पर बुलाया जा रहा था जो, स्वतत्रता दिवस विषय पर निबन्ध आदि तैयार कर लाए थे।

तब राम निगम की बारी आई। राम निगम के काव्य पाठ के बाद पारस का नाम पुकारा गया। पारस बडे नपे-तुले कदमो से मंच पर आया। माइक को अपने मुह के सामने जमाया और बोलने लगा–

"आदरणीय मुख्य अतिथि महोदय, प्रिसिपल साहब, अध्यापकगण व मेरे प्यारे साथियो। बहुत ही प्रसन्नता का अवसर है कि हर वर्ष की भाति इस वर्ष भी हम अपने विद्यालय में स्वतत्रता दिवस मना रहे है। आज से ठीक अडतालिस वर्ष पूर्व हमारा प्यारा भारत देश विदेशी चुगल से छूट कर आजाद हुआ था। तब से हम सब को एक स्वतंत्र देश के नागरिक कहलाने का गौरव प्राप्त हो चुका है। लेकिन जहाँ तक मै समझ सका हूँ। अपने आपको आजाद कह लेना और वास्तविक रूप से आजाद होने मे, बहुत अधिक अतर है। यहाँ पर मुझ से ज्यादा पढे-लिखे, बुद्धिमान और सम्मानित महानुभाव उपस्थित है, मैं तो उनके मुकाबले मे कुछ भी नहीं जानता। मुझे जब भी सुअवसर प्राप्त होता है

स्वतंत्रता दिवस समा

ऐसे महानुभावों से बातचीत अवश्य करने का प्रयास करता हूँ। साथ ही अखबार भी जरूर पढा करता हूँ। इसलिए मेरे छोटे मुँह से कोई बडी बात निकल जाए तो आप सब क्षमा कर देंगे, ऐसी आशा है। आप सब से मैं यही पूछना चाहता हूँ कि क्या हमने वास्तविक आजादी प्राप्त कर ली है ?

आए दिन हम सुनते हैं, मजदूरो को मालिक पूरी मजदूरी नहीं देते। अपना हक मांगने पर उन्हे मारते-पीटते हैं। सताते हैं, और तो और उन्हे नौकरी तक से निकाल देते हैं। जान से भी मरवा देते हैं। बहुओं को जला देने की घटनाएँ हर रोज अखबारों मे आती है। शरीफ आदमी को हमेशा सताया जाता है। सताए हुए परेशान आदमी की यदि ऊपर तक पहुँच नहीं है तो पुलिस उसकी नहीं सुनती। न्यायालय से वह न्याय प्राप्त नहीं कर सकता। बच्चों को गायब कर दिया जाता है। अशिक्षा इतनी कि बच्चों की बलि तक चढा दी जाती है। मेरी कॉलोनी की मायारानी जैसी बहनें इतनी छोटी आयु में घर घर की झाडू सफाई करने को मजबूर हैं। मेरे मंगतराम जैसे दोस्त की पढाई बीच में ही छूट जाती है। वे फीस चुकाना तो दूर, पेट भरने को पैसे नहीं जुटा पाते।

क्षमा करें; चाहे कोई कुछ भी कहे। मैं तो उसी दिन को असली आजादी कहूँगा, जब हमारे प्यारे देश भारत की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थितियाँ हम सब के अनुकूल होंगी। हर नागरिक को प्रगति के समान अवसर मिल पाएंगे।

मैं बहुत कुछ कह चुका हूँ, अब थोडे शब्द और कहूँगा। और अपना स्थान ग्रहण करूंगा। वह यह कि शिक्षा को प्राप्त कर हम समाज मे व्याप्त प्रतिकूल स्थितियो से लडने, संघर्ष करने का बल प्राप्त कर सकते हैं।

अभी अभी मेरे साथी, राम निगम ने कविता पढी । वह एक अच्छी या सही कविता बनी भी या नहीं। काव्य के गुण-दोषों की बात तो मैं नहीं करूंगा। हॉ कविता का जो भाव है वह, पढ-लिख कर ऊंचा पद ग्रहण करने का है। मै क्षमा मांगते हुए निवेदन करना चाहूंगा कि शिक्षा का अर्थ तो इतना सीमित कदापि नहीं। सिर्फ पढने के लिए पढें। या केवल ऊँचे पदों तक पहुँचने के लिए पढे तो इस से समाज को रूढिवाद से मुक्ति कैसे मिलेगी। समाज आगे कैसे बढेगा ? हमे सब

के लिए पढना है। मंगतराम और मायारानी जैसे बच्चों को शोषण से मुक्ति दिलाने के लिए पढना है। शोषण, कुप्रथाओं से मुक्ति तथा उचित न्याय पाने के लिए हमें संघर्ष करना है। इन बातों के लिए कभी पढाई बीच मे छोडनी पडे तो कोई हर्ज नहीं है। हमारा वास्तविक उद्देश्य अपने राष्ट्र को आगे ले जाना है। अपने समाज में चेतना लाना है। ताकि कल हम असली रूप में आजाद हो सकें। आप सबका बहुत-बहुत धन्यवाद ! जय हिन्द !"

"जय हिन्द जय हिन्द" और तालियों की गडगडाहट, चारों ओर गूंज उठी।

जब पारस मंच से उतरने लगा तो मुख्य अतिथि ने पारस को अपने पास बुलाया। उसकी पीठ ठोंकी– "क्या नाम है तुम्हारा ? पारस ! वाह कमाल कर दिया। तुम एक होनहार बच्चे हो। कभी जरूरत हो तो मेरे पास अवश्य आना।"

मुख्य अतिथि नगर के जिलाधीश डॉ. महेश गुप्ता थे। पारस की इतनी प्रशंसा और चारों ओर से उठती वाहवाही, प्रिंसिपल साहब को अच्छी न लगी।

हॉ सभा समाप्त होने पर, पारस के कुछ मित्रों नरोत्तम कृपाल और दयाल ने, पारस को अपने कंधो पर उठा लिया। यादव सर ने भी बहुत प्यार किया।

❂❂

आजादी और राष्ट्रभाषा का प्रश्न

पारस खुशी-खुशीं घर की ओर जा रहा था कि अपने मम्मी-डैडी को आज के सारे कार्यक्रमो के विषय में विस्तार से बताएगा। परन्तु घर में कदम रखते ही वह धक-सा रह गया। डैडी की तबीयत ज्यादा बिगड गई। वे पेट के बल लेटे हुए थे। डाक्टर इंजैक्शन् लगा रहा था।

जब बाद मे, पारस डाक्टर को फीस देकर, बाहर दरवाजे तक छोडने गया तो पूछा– "डॉक्टर साहब, क्या बात है। मेरे डैडी कई महीनो से कभी थोडे कम तो कभी बहुत ज्यादा बीमार चल रहे हैं ?"

डाक्टर साहब ने पारस की पीठ थपथपाते हुए कहा– "चिंता की कोई जरूरत नहीं बच्चे। कुछ मुसीबत आए भी तो बहादुरो की तरह

उसका मुकावला करना चाहिए। मैं तुम से कुछ छिपाना नहीं चाहता पर तुम घबराना नहीं। तुम्हारे डैडी के शरीर मे क्षय रोग के लक्षण पैदा हो गए हैं। वैसे तो आजकल यह एक मामूली बीमारी समझी जाती है। इसके लिए अच्छी दवाइयॉ वन चुकी हैं। फिर भी यदि तुम लोग इन्हे किसी पहाडी जगह, मेरा मतलब है किसी सेनिटोरियम ले जा सको तो तकलीफ जल्दी ठीक करने में हमे बहुत मदद मिलेगी। तुम्हारी मम्मी को भी मैंने यही सुझाव दिया है। ओ.के., अंडरस्टैंड ?" और डाक्टर साहब अपना बेग झुलाते हुए आगे बढ गए।

पारस ने मम्मी से सलाह की। मम्मी ने बताया— "आजकल तुम्हारे चाचा मसूरी गए हुए हैं। उन्हें पत्र लिखकर देखो। उनके वहॉ पर होने से हमे सुविधा रहेगी। पर तुम्हारी पढाई का हर्जा जो होगा।"

"वह मैं पूरी कर लूंगा। यदि वहाँ सब ठीक ठाक व्यवस्था हो गई तो मैं बीच-बीच में आता-जाता रहूँगा।" पारस ने उत्तर दिया और चाचा जी को पत्र लिखने बैठ गया। जो फौज में सैकेंड लैफ्टिनेंट थे।

तीसरे दिन जब पारस स्कूल पहुँचा तो एक लड़के ने बहुत अनजान बनते हुए पारस से टकरा कर ठोकर मारी।

"क्या देखकर नहीं चलते।" पारस ने उसकी शरारत समझते हुए सख्ती से कहा।

"वाह भई खूब, पारस साहब। दिखता तो सब कुछ केवल आप ही को है। स्कूल, समाज, राष्ट्र और दुनिया का चप्पा-चप्पा। बडी तेज नजर पाई है जनाब ने। खूब जमकर मजाक उडाना आता है दूसरों का। काव्य शास्त्र के जानकार भी तो आप ही हो। बड़े विद्वान बने फिरते हो।" उस लडके ने पलट कर उत्तर दिया।

उस लडके का दूसरा साथी भी साथ खडा-खडा धूर्त हॅसी हॅस रहा था। बोला— "अबे पारस साहब, पारस साहब लगा रखी है जैसे खुदा हो। इन जैसो को तो परसू कहना चाहिए परसू ओए परसू क्या दूसरों को बिना गिराए तुम ऊपर नहीं उठ सकते । मजा चखाऊँ राम निगम की बुराई करने का........" इतना कहने के साथ ही उसने एक लात पारस के जमा दी।

पारस ने उसका हाथ पकडा तो चार पांच और लडके पारस को घेर कर खड़े हो गए। इतने मे नरोत्तम वहॉ आ गया। पारस का हाथ पकड कर उसे एक ओर ले गया।

नरोत्तम ने कहा– "पारस, इन से उलझना ठीक नहीं। यह सब राम निगम गुट के लडके हैं। शायद तुम नहीं जानते। राम निगम अपने प्रिसिपल साहब का भतीजा है। इसीलिए कुछ लडके अपने फायदे के लिए राम निगम की तरफदारी करते हैं।"

"तो क्या हुआ मैं सब को समझ लूँगा। समझते क्या हैं अपने आप को।" पारस गुस्से से कॉपते हुए बोला।

"नादान नहीं बनते।" नरोत्तम ने, पारस को समझाया– "वक्त और ठीक अवसर देख कर चलना चाहिए। अभी इन बदमाशों से उलझना ठीक नहीं।" कहते-कहते वह पारस को दूर एक पेड़ के नीचे ले जाने लगा। तभी स्कूल लगने का घंटा बज गया।

सभी लडके प्रार्थना के लिए मैदान में पहुँच गए।

आधी छुट्टी में, नरोतम के साथ-साथ कृपाल और दयाल भी पारस के पास आ गए। उनको भी पारस और उन लडकों की लडाई के बारे मे पता चल चुका था। पारस अभी तक अनमना था। अतः पारस का मन बहलाने के लिए दयाल बोला–"पारस ! एक मजेदार, बात बताऊँ तुम्हें।" सभी ने उत्सुकता से दयाल की ओर देखा, और कहा– "हॉ हॉ कहो तो।"

दयाल ने कहानी की तरह बात शुरू की– "कल मुझे शर्मा सर ने बुलाया और कहा कि– मैं जाकर अंग्रेजी वाले आहूजा सर को बुला लाऊँ।"

"फिर ?" कृपाल ने पूछा।

"फिर क्या ?" दयाल ने आगे कहा– "न जाने कहॉ चले गए थे आहूजा सर। खैर मैंने बड़ी मुश्किल से आहूजा सर को ढूँढा। वे किसी क्लास में नहीं थे। बडे मजे से स्टॉफ रूम मे किसी से गप्प लडा रहे थे। दूसरे सर कह रहे थे– क्या तुम्हारा पीरियड खाली है ? आहूजा सर ने जबाव दिया– कौन परवाह करता है पीरियडों की। प्रिंसिपल अपना आदमी है। मैंने उनकी बातचीत मे धीरे से विघ्न डाला– सर आपको शर्मा सर याद कर रहे हैं।"

इस पर आहूजा सर ने मुझे घूरते हुए डांटा– "कांट यू स्पीक इन इंगलिश ?"(क्या तुम अंग्रेजी में नहीं कह सकते)

मैंने उसी सहज भाव से उत्तर दिया– "अध्यापक जी ! मेरी राष्ट्र भाषा हिन्दी है।"

इस पर दूसरे सर जोर से हँसने लगे। आहूजा सर तिलमिला गए– "देखूंगा, तुम्हें भी देखूंगा। बडे पर लग गए हैं। हूँ, आजकल पारस के साथ बहुत रहने लगा है। इसीलिए।"

"पारस भैया, मैं तो एकदम हक्का-बक्का रह गया। क्या बड़े लोग सच को भी बर्दाश्त नहीं कर सकते ?"

इस बार कृपाल बोला– "मेरा तो यह विचार है, दयाल भाई कि यदि इन सबको बार-बार हर एक के मुँह से सच सुनना पडे, तो इन्हें सच सुनने की आदत पड जाएगी। यह काम और दायित्व हम बच्चों और किशोरों का है जो किसी भी प्रकार के प्रलोभनों में पडे बगैर हमेशा निडर होकर हर एक के सम्मुख सच सच बात कह दें; उसके लिए हमें, चाहे कितनी हानि भी क्यों न उठानी पड़े।"

बिलकुल ठीक कहा आप लोगों ने, नरोत्तम बोला– "परसों स्वतंत्रता दिवस समारोह में पारस भैया ने परोक्ष रूप में यही सच कहा कि राम निगम वाली कविता का ठीक रूप नहीं बना। दरअसल वह कविता थी भी नहीं। दूसरी बात; सिर्फ आंखें मूंद कर पढाई पढने और डिग्रियाँ पास करने से क्या बनता है। देश हित में राष्ट्रीय आन्दोलन के समय बहुत से किशोर, नवयुवक पढाई को छोडकर आजादी की लडाई में शामिल हो गए थे।"

काफी लम्बे मौन के बाद, अबकी पारस बोला– "आजकल के युवा नेता तो बहुत लम्बे-चौडे भाषण देते फिरते हैं हम ने आजादी बडी कठिनाई से हासिल की। फिर साथ ही यह भी कहते हैं कि की बिना खून खराबे के अहिंसा के तरीके से हमें आजादी मिल गई। दरअसल न तो मैंने और न ही हमारे इन नए नेताओं ने 1947 से पहले का समय देखा है। मगर मैं आप लोगों को बताऊँ जो मैंने चन्द्रभान अंकल से सुना है। चन्द्रभान अंकल हमारे पडौस में ही रहते हैं। चाहो तो उन के मुँह से कभी आ कर सुनना। वे बताते हैं चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह और लाहिडी न जाने कितने-कितने और लोग जैसे मदन लाल ढींगरा, ऊधम सिंह जैसे सैकडों लोग पूरे संघर्ष के साथ अपनी जानें गंवा गए। लेकिन जब आजादी मिली। देश के दो टुकडे हो गए। इसी शर्त पर तो आजादी मिली थी। फिर आजादी मिलने के तुरन्त पहले और उसके बाद खूब फसाद हुए। खून-खराबो से विशेष रूप से पंजाब, सिंध, बंगाल की धरती मैली हो गई। बहुत से निर्दोष लोगों का

खून नदियों की तरह कई महीनों तक बहता रहा। वास्तव में हमारा देश है भी तो बहुत बड़ा। और बहुत बडी जनसंख्या वाला। बहुत से लोगों पर इन बातों का जरा भी असर नहीं पडा। वे सोचते हैं कि हमें ऐसे ही आजादी बडी आसानी से मिल गई। जैसे आजादी नहीं हुई, कोई दान हुआ जो चुपचाप अंग्रेज हमारे कटोरे में डालकर चले गए।"

इस पर नरोत्तम और कृपाल के मुँह से अनायास ही आह निकल गई।

दयाल ने बहुत भावुक स्वर में कहा– "इतनी मंहगी और पग-पग कठिनाइयो से प्राप्त की गई आजादी की हमें रक्षा करनी होगी। इसकी लाज रखनी होगी।"

पारस ने दयाल के कंधे पर हाथ रखा– "यह बातें, जब इस तरह की कोई परीक्षा आ जाए तभी करनी उचित है।"

इस दिन के बाद, राम निगम के गुट के लड़कों के साथ इन लोगों की तनातनी रहने लगी। पारस ने अपने साथियों को समझा रखा था कि जहाँ तक हो सके इस फिजूल किस्म की लडाई से बचा जाए। एक ही स्कूल के छात्रों के बीच बेकार के झगड़ों से क्या लाभ। देखने सुनने वाले सभी हँसेंगे ही।

इसी तरह दिन बीत रहे थे।

एक दिन पारस सवेरे-सवेरे दयाल के घर पहुँचा उसे पन्द्रह दिन की छुट्टी का प्रार्थना पत्र दिया और कहा– "दयाल इसे ध्यान से प्रिंसिपल या क्लास टीचर को दे देना। कोई फौज का सिपाही चाचा जी ने भेजा है। हम आज ही दोपहर की गाडी से जल्दी जल्दी तैयार होकर मसूरी के लिए रवाना होंगे। डाक्टर साहब का कहना है कि कुछ समय किसी पहाडी पर रहने से मेरे डैडी जल्दी ठीक हो जाएंगे।"

दयाल ने कहा– "हाँ पारस डाक्टर साहब ने बिलकुल सही सलाह दी है। तुम हर तरह से बेफिक्र हो कर जाओ। अपने पापा की लग कर सेवा करना। यहाँ पीछे का कोई काम और हो तो वह भी बताते जाओ या जाकर खत लिखना। वैसे भी चिट्ठी लिखते रहना। तुम्हें बहुत बहुत शुभ कामनाएँ।" दयाल ने पारस को गले लगा लिया।

❀❀

प्रकृति की गोद में

दोपहर की गाडी से पारस ने अपने मम्मी-डैडी के साथ यात्रा आरंभ की। सिपाही साथ होने से उन्हें बहुत सुविधा रही। रात को वे लोग देहरादून पहुँचे। रात उन्होंने वेटिंग रूम मे गुजारी। सवेरे एक बस से सभी मसूरी पहुँच गए। बस से उतर कर पारस बहुत हैरान रह गया। जितने यात्री बस से उतरे थे लगभग उतने ही कुली-मजदूर समान उठाने को तत्पर खडे थे। हर कोई एक दूसरे को धकिया कर पहले किसी भी यात्री का सामान उठा लेना चाहता था। वे आपस मे बुरी तरह से लड-झगड रहे थे और यात्रियो से कम से कम पैसे देने को कहते हुए गिडगिडा रहे थे। इनमें बहुत सारे बाल-मजदूर थे।

"क्या इन्हें और कोई अच्छा काम नहीं मिलता पारस ने सिपाही से पूछा।

"काम कहॉ है इनके लिए या इनके माँ-बाप के लिए, पारस बाबू यहॉ पहाडों पर तो और भी गरीबी है। लोग-बाग घूमने फिरने ऐश उडाने यहॉ पहाडो पर आते हैं। पैसा बहा जाते हैं, अपने मनोरंजन लिए। मगर जो लोग बारह महीनों पहाडों पर रहते हैं। उनके लिए इन्हीं पहाडों पर पल भर को भी खुशी नहीं।" सिपाही ने सारी स्थिति पारस को समझाई।

"तो यह लोग, हमारे इलाके मे आकर क्यों नहीं बस जाते।" पारस ने भारी आवाज में कहा– "मेरे ख्याल में वहॉ, यहॉ के मुकाबले मजदूरी कुछ अच्छी होनी चाहिए।"

सिपाही बोला– "वैसे तो ठीक है। कुछ तो मेहनत-मजदूरी के लिए मैदानो में चले जाते हैं किन्तु हर एक के लिए यह संभव नहीं होता। और तो और, अपनी धरती का मोह भी बहुत बडी चीज होता है। हर आदमी आखिरी दम तक अपनी धरती से जुडा रहना चाहता है। कुछ पुराने लोग तो ऐसे मिलेंगे जो कि धरती छोडने के बजाय मर जाना बेहतर समझते हैं।" यह लोग बाते करते हुए चाचा जी की प्रतीक्षा कर रहे थे।

तभी दूर से देखा– कोई फौजी अफसर इन्हीं की ओर बढा चला आ रहा है।

यह पारस के चाचा जी ही थे जो थोड़ी ही देर में वहाँ आ पहुँचे। पारस ने पॉव छुए। चाचा जी ने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरा। भाई–भाभी को प्रणाम किया। उन सब का हाल पूछा। दो मजदूरों ने उनका सामान उठाया। और वे वहाँ से चल दिए।

चाचा जी ने उनके लिए एक छोटे, परन्तु बहुत ही खूबसूरत घर की व्यवस्था कर रखी थी। दीवारों पर नीले और नारंगी रंग के फूलों वाली बेले चढ रही थीं। साथ ही कई किस्म के पेड-पौधे उगे हुए थे। दूर तक जहॉ निगाह डालो, हरियाली ही हरियाली नजर आती थी। पहाडियो पर बडे-बडे पेड जैसे सीढ़ियों से ऊपर चढते हुए और उतरते हुए दिखलाई देते थे।

"कितना सुन्दर है यह सब।" पारस के पापा कह उठे।

पारस को लगा– अब यहॉ पापा बहुत जल्दी जरूर ठीक हो जाएंगे। पारस जानता है कि आदमी जब मन से प्रसन्न होने लगता है तो तन से भी धीरे-धीरे ठीक होने लगता है।

चार पॉच रोज गुजरते न गुजरते पारस के पापा के स्वास्थ्य मे सुधार के लक्षण दीखने लगे। वह पारस से बोले– "अब हमें शीघ्र ही यहॉ से घर लौटना चाहिए।"

पारस ने अपनी मम्मी से कहा–"सुना डैडी क्या कह रहे हैं ? मुझे तो यह बात जची नहीं। जब तक पापा पूरी तरह ठीक नहीं हो जाएं, हमें इन्हे यहीं रखना चाहिए।"

मम्मी ने उतर दिया– "तुम कहते तो ठीक हो परन्तु यह भी सोचो, आखिर कब तक हम अपने घर से दूर रह सकते हैं। यहॉ पर मंहगाई भी तो बहुत ज्यादा है। बिना नौकरी पर गए तो कुछ दिनो के बाद तुम्हारे पापा का वेतन कटने लगेगा।"

एकदम से पारस ने कोई उत्तर नहीं दिया। पैसो की कमी की बात जान कर, मन ही मन थोडा परेशान हो उठा।

मम्मी उसके मन के भाव को समझ गई। उन्होने पारस से कहा– "बेटे इस छोटी उम्र मे तुम्हें किसी बात की चिन्ता करने की जरूरत नहीं। सारा दिन यहॉ मत पडे रहा करो। जाओ, थोडा इधर-उधर घूम-घाम आओ।"

पारस अपने पापा के पास से हटना नहीं चाहता था। परन्तु मम्मी की आज्ञा का ख्याल करते हुए बेदिल से वहॉ से उठ गया।

बाहर बहुत खुला हुआ वातावरण था। दूर ऊँचे आसमान की ओर सफेदी ही सफेदी दीख रही थी, जैसे बर्फ की फुहारे छूट रही हो और इसी दृश्य को देखकर सारे पेड मस्ती से झूम रहे हो।

इन दृश्यो से पारस मे थोडी स्फूर्ति आयी। वह तेज कदमो से चलने लगा। फिर ऐसे ही भागने लगा। जब गति कुछ कम हुई तो उसे दूर से बस अड्डा दिखलाई दिया। पारस उसी ओर ही बढने लगा।

⚙⚙

अपनी धरती

बस अड्डे पहुँच कर उसने वही दृश्य देखा। सैलानियों का बसों से उतरना और मजदूरों की पहले सामान उठा लेने के लिए आपस में होड।

पारस सोचने लगा कि यह कैसी होड है। क्या इसे जीने के लिए संघर्ष कहना उचित होगा ? जीवन-संघर्ष। नहीं। यह तो मजदूर का मजदूर के साथ सीधा टकराव है। एक ऐसी लडाई है यह, जो मजदूर अपने ही भाई मजदूर के साथ लडने को विवश है। और अमीर सैलानी ? उनको इन सब बातों से क्या मतलब। उनके पास ढेरों पैसा है। वह तो सिर्फ अपनी ऐश और आराम से ही मतलब रखते हैं।

इन्हीं विचारों में पारस एक गुलमोहर के पेड के नीचे आकर खडा हो गया। दूर कहीं से सूरज निकल आया था। उसकी कुछ झीनी झीनी किरणे हरी धरती पर फैलनें लगीं।

तभी एक बूढा मजदूर पारस के निकट आ कर खडा हो गया। तमाम सैलानियो और मजदूरो की भीड छंट चुकी थी। शायद इस बूढे मजदूर को कोई मजदूरी नहीं मिली थी।

दोनो ही एक दूसरे के लिए अजनबी और अकेले थे। थोडी चुप्पी के बाद, पारस ने कुछ सोचते हुए धीरे से पूछा– "क्यो बाबा आप को मजदूरी नहीं मिली ? आपके यहॉ सब लोग आपस मे इतना लडते झगडते क्यों हैं ?"

बूढे ने आह भरते हुए कहा– "बाबू साहब ! यह क्या बात पूछ डाली आपने। यह लडाई तो सदियों से गरीब तबके मे चली आई है और मेरे ख्याल से कभी बंद नहीं होने वाली। सभी को तो खाने को

रोटी चाहिए। जो पहले हाथ मार ले जाता है उसी को रोटी मिल जाती है। बाकी जो रह जाते हैं, अपने बाल बच्चों के साथ भूखे, आधे-भूखे पेट सो जाते हैं।"

पारस फिर कुछ सोचते हुए बोला– "आप सब को लाइन में लगकर बारी-बारी से मजदूरी उचित दामो पर लेनी चाहिए।"

कहने को तो पारस ने बोल दिया किन्तु उसे याद आया कि शहर मे जो लोग सभ्य कहलाते हैं वही क्या राशन की लाइनो का पालन करते हैं। या क्या वे बसों की लाइनें (क्यू) नहीं तोडते ?

थोडी देर और गुजरी होगी। फिर से बस अड्डे पर मजदूरों की भीड जमा होने लगी। शायद जल्दी ही कोई और बस आने वाली थी। बाल मजदूरो की संख्या भी कम नहीं थी, जो इतनी सर्दी के बावजूद फटे-फटे से कपडे पहने हुए थे। दो नाटे, चपटे माथे वाले और गौरे रग के लडके इस तरह से वहाँ खडे थे कि जिस स्थान पर भी बस रूके, वहीं अपने मजदूर साथियों को चीरते हुए बस मे प्रवेश कर जाएं और सामान उठाने का मौका पा सकें। उन्हें देखकर पारस को सहसा अपने शहर के उसी नाटे गौरे बालक का ध्यान हो आया जिसे मोटा ढाबे वाला पकड कर ले गया था। इस विचार के आते ही पारस का मन खिन्न हो उठा। फिर पारस का मन इन दोनो से बातचीत करने को होने लगा। परन्तु उसने अपने को संभाल कर चुप करा लिया। उसने सोचा कि कहीं बातचीत लम्बी न चल निकले। इतने में बस आ जाए और इन की मजदूरी मारी जाए।

सचमुच उसी समय बस आ गई। पारस को फिर से वैसे का वैसा नजारा देखने को मिला जैसा हर बस के आने पर होता था। बस की खरर्र खरर्र और शायं, शायं की आवाज के साथ थोडा आगे पीछे होते हुए रुकना। कुछ बच्चों के रोने की आवाजें बस में से पहले उतरने की होड में दरवाजे मे फंसे से यात्री। कुल मिलाकर खूब ऊँचा शोर आकाश को चीरता हुआ। साथ ही धक्कम-धक्का। इन सब बातो से बढ कर मजदूरो की रेलपेल, जो पारस को अन्दर तक कचोट जाती।

पारस प्राय. वहाँ हर रोज आने लगा और कई मजदूर लडको से उसकी एक प्रकार से दोस्ती हो गई। वह उनके दुख: दर्द की कहानियों सुनता। उनकी अति सीमित आमदनी और अभावों की बातें सुनकर उन से उसकी सहानुभूति बढती गई।

❂❂

मम्मी की पेरशानी

एक दिन मम्मी ने पारस से पूछा कि घर से बाहर निकलने के बाद वहा कहाँ-कहाँ जाता है और कैसे वक्त गुजारता है।

मम्मी सोचती थीं कि पारस बाग, बागीचों, झरनो और पहाडियो की सैर कर, प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेता होगा। परन्तु जो उत्तर पारस ने उन्हे दिया उसे सुनकर मम्मी को कुछ निराशा-सी हुई।

पारस ने बताया– "दोस्तों के बीच बहुत अच्छा समय निकलता है मम्मी।"

मम्मी ने फिर पूछा– "यहाँ तुम्हारे कौन से दोस्त आ गए ? जो लोग यहाँ घूमने आते हैं वे तो ज्यादा से ज्यादा दो तीन रोज रुकते हैं, फिर चलते बनते हैं। उन से कैसी दोस्ती।"

"नहीं मम्मी।" पारस ने बताया– "यहाँ के सारे बाल मजदूर मेरे दोस्त और साथी बन गए हैं।"

तब मम्मी और दुविधा मे पड गई। उनके मन की बात आप से आप जबान पर आ गई– "पारस दोस्ती बराबर वालो से होती है। कुछ तो अपने स्तर (स्टैण्डर्ड) का ध्यान रखना चाहिए। यह क्या कि तुम कुलियों-मजदूरों के बीच जा बैठो।"

शाम हो गई थी। आसमान मे घने काले बादल छा रहे थे। इससे ठंड एकदम बढ गई थी। मम्मी कमरे के कोने मे बनी अंगीठी (फायर प्लेस) में लकडियाँ डाल कर आग जलाने लगी जिस से कमरा गर्म हो जाए। साथ ही उनके कान पारस की ओर लगे थे कि पारस जरूर कुछ उत्तर देगा। लेकिन तभी दरवाजे पर दस्तक हुई।

"चाचा जी !" कहता हुआ पारस दरवाजे की ओर लपका।

सचमुच चाचाजी ही थे। अपने चिरपरिचित रौबीले पोज मे। फौजी वर्दी, और ओवर कोट पहने हुए, उन्होने कमरे मे प्रवेश किया।

प्राय हर दूसरे तीसरे दिन वे भाई का हाल पूछने इसी तरह लगभग इसी समय आया करते थे।

"क्या हाल है भाभी। भाई साहब सो रहे है। तबीयत कैसी है उनकी। अच्छा अभी-अभी पारस से क्या बातचीत हो रही थी।" चाचा जी ने एक साथ कई बाते पूछ डालीं।

"क्या बताऊं आपको भैया।" मम्मी ने कुछ खीजे हुए स्वर मे कहा– "हमारा पारस तो यहाँ बिगड जाएगा। सारा सारा दिन इन छोटी जाति वाले कुलियों-खलासियो के बीच गुजारने लगा है। यह कोई अच्छी बात तो है नहीं।"

कुछ देर के लिए वहाँ पूरी तरह से मौन छा गया। कोई कुछ भी नहीं बोला। तब चाचाजी ने पारस की ओर इस तरह से देखा जैसे कह रहे हों– "क्यो पारस ?"

पारस उन का आशय समझ गया कि वे पारस से अपनी बात साफ-साफ कहने को कह रहे हैं।

पारस बोला– "देखिए चाचा जी ! मैं, सब को अपनी खुली आँखों से देखना चाहता हूँ और अपनी खुद की राय बनाना चाहता हूँ। क्या हम इन लोगों से इसलिए न बोलें कि यह लोग गरीब हैं। इन में भी कुछ बुराइयॉ हो सकती हैं, परन्तु शहरी लोगों की तरह इन में छल कपट नहीं है। यदि है भी तो वह इन की अपनी मजबूरी हो सकती है। यह लोग सीधे-सादे हैं। एक दूसरे के काम आने वाले। थोड़ा प्यार और दो मीठे बोल पाकर उसी के बन जाने वाले। मेरे विचार से शहर वालो के मुकाबले यह अच्छे मित्र सिद्ध हो सकते हैं। यहाँ मेरे पास कुछ समय है, इसलिए इन में थोड़ा उठ-बैठ लेता हूँ।"

चाचाजी ने पारस की ओर थोडी प्रशंसा की दृष्टि से देखा।

इस पर मम्मी बोल उठी– "बातें तो यह पूरे विद्वानों की तरह करने लगा हैं। फिर भी आखिर सोसायटी का असर पडे बिना नहीं रहता। इन मजदूर लोगों को कई बार यात्रियो से और कभी कभी आपस में लडते झगड़ते नहीं देखा आप लोगों ने ?"

पारस ने एक ठंडी सास खींची– "न जाने क्यो मुझे यह लडाई वैसी लड़ाई जैसी नहीं लगती।" पारस कुछ आगे कहना चाहता था किन्तु अटक गया।

"ऐसी और वैसी लडाई क्या ?" मम्मी फिर बोलने लगी– "लडाई तो लड़ाई होती है।"

"नहीं भाभी।" चाचाजी ने कहा– "पारस ठीक ही कह रहा है। इन लोगों के मन में छल-कपट नहीं है। इन के मन में किसी के लिए दुश्मनी तो नहीं हैं। इनकी लडाई जो हम को नजर आती है, उसे मैं "जीवन-सघर्ष" कहना चाहूँगा। यदि आप इरो लड़ाई ही कहना चाहें

तो यह अपने हक के लिए लडी जाने वाली लडाई है। दरअसल इसे लडाई न कह कर सार्थक (काज) संघर्ष कहना ही ठीक होगा। लडाई और संघर्ष में अन्तर होता है।"

पारस चाचा जी के वक्तव्य से बहुत प्रभावित हुआ। उसे खुशी हुई कि जो बात वह स्वय मम्मी को नहीं समझा पाया। चाची जी ने उसकी ठीक से व्याख्या कर दी।

लेकिन इस पर भी मम्मी नहीं मानी। उन्होने कहा– "कुछ भी कहिए आखिर छोटी सोसायटी का असर पडे बिना नहीं रहता। अब तो इसके पापा की तबीयत में काफी सुधार हो रहा है। पारस को स्कूल लौट जाना चाहिए। आप इसे भिजवाने का प्रबंध कर दे। हम भी कुछ समय बाद पीछे-पीछे शहर पहुँच जाएंगे।"

"ठीक है भाभी।" चाचा जी ने कुछ सोचते हुए कहा– "जैसे आप उचित समझें, पारस की पढाई की बात तो है ही। साथ ही मुझे भी थोडी शंका है कि मुझे शायद यहॉं से कही दूसरे मोर्चे पर भेज दिया जाए। तब आप कहीं अकेले न रह जाएं।"

मम्मी ने पूछा– "अभी कोई पक्के आर्डर (आदेश) तो नहीं आए ? वैसे सोचती हूँ कि अब कोई डर वाली बात तो है नहीं।"

चाचा जी ने कहा– "डाक्टर ने मुझे बताया है। भगवान् की कृपा से डर वाली बात नहीं है। वैसे अभी तक मेरे ट्रांस्फर आर्डर भी नहीं आए। फिर भी चाहता हूँ चार रोज़ के लिए पारस को और रोक ले। दरअसल मैंने पारस के लिए देहरादून की कैन्टीन से एक अच्छा टेपरिकार्डर मंगवाया है। वह कल दोपहर या शाम तक जरूर आ जाएगा।"

चाचा जी से यह समाचार सुनते ही पारस की खुशी का ठिकाना न रहा। एकाएक पुलकित स्वर से कह उठा– "ओह चाचा जी आप कितने अच्छे हैं। यू आर ग्रेट चाचा जी।" कहता हुआ पारस चाचा जी से लिपट गया।

"पर देखो ज्यादातर कैसिटे मैंने शास्त्रीय संगीत पर आधारित फिल्मी गानो की ही मगाई हैं। एक दो विशुद्ध शास्त्रीय भी और दो आम चालू फिल्मो की भी।"

"रेडियो से मैं कभी कभी हर प्रकार का संगीत और नाटक सुनता हूँ चाचा जी।" पारस ने कहा– "अब आपकी पंसद की कैसिट्स

सुनकर आप से चर्चा करूंगा। हॉं याद आया....'' पारस कुछ याद करते हुए बोला– ''एक बार एक श्रोता को आकाशवाणी वालों का उत्तर था कि यदि आप किसी वृक्ष के पत्ते काटने की बात करते सो सोचा भी जा सकता... आप ने तो पेड की जड़ काट देने की बात की है।''

चाचाजी ने तपाक से कहा– ''बिलकुल सही उत्तर दिया उन्होंने। हमारा सारा संगीत इन्हीं राग-रागनियों पर ही तो टिका हुआ है।'' पारस थोडा रुका फिर कुछ सोचते हुए बोला– ''हॉं चाचा जी एक खाली कैसिट भी जरूर लाइएगा।''

''जरूर जरूर।''

चाचा-भतीजा बातों में मग्न थे। तभी मम्मी गर्म गर्म चाय एक केतली में बना कर ले आईं। साथ ही कुछ आलू-प्याज के पकोडे भी एक तश्तरी में थे।

पापा भी उन सब की बातें सुनते सुनते उठ गए। अच्छी नींद लेने से वे काफी स्वस्थ दिख रहे थे।

सभी ने अपनी अपनी प्याली उठाई और चाय की चुस्कियाँ लेने लगे। पकोडों की प्लेट भी खत्म हो गई। इस प्रकार पूरे वातावरण मे मस्ती छाई रही।

❀❀

टेप रिकार्डर की प्रतीक्षा

पारस सारी रात खुशी के मारे पूरी तरह सो नहीं सका। रह रह कर उसके सामने टेपरिकार्डर जैसे झूम झूम का नृत्य करने लगता। पारस टेपरिकार्डर की कल्पना में भटक भटक जाता कि कैसा होगा– टेपरिकार्डर, काला या लाल या मिलेजुले रंगो वाला। छोटे आकार का या बडे साइज वाला। कई प्रकार का संगीत और फिल्मी गाने भी उसके कानो मे एक गूंज पैदा करने लगते।

पारस सुबह कुछ जल्दी ही उठ गया। नहाया-धोया। पापा-मम्मी के साथ नाश्ता किया। पापा को दवाई खिलाई। फिर साथ लाई हुई अपने कोर्स की पुस्तकें पढने लगा। इस के बाद वह रह न सका और अपने नए मित्रो के पास जा पहुँचा। उन्हें सूचना दी– ''कि उसके लिए उसके चाचाजी एक नया टेपरिकार्डर ला रहे हैं। टेपरिकार्डर में तुम

लोग जो जो भी बोलोगे। वापस वहीं का वही सुनाई देगा।

"हॉ यह तो हम जानते हैं। पर नजदीक से तो आपके पास से ही देखेंगे।" संतू ने कहा।

"और नई से नई पुरानी से पुरानी फिल्मों के गाने भी सुन लो।" नेकीराम ने अपना ज्ञान दर्शाया।

"हॉ हॉ, हमे सुनाओगे ना, अच्छे-अच्छे गाने।" केवल ने पूछा।

"क्यो नहीं। ऐसा करना कि तुम सब कल शाम को ही मेरे घर आ जाना, क्या पता किसी वजह से चाचा जी जल्दी टेपरिकार्डर न ला पाएं।" पारस ने उन्हे बडे प्यार से आमंत्रित किया।

फिर पारस वहॉ ज्यादा देर तक न रुका। उसने सोचा, उसे क्या पता बहुत जल्दी भी तो टेपरिकार्डर आ सकता है।

पारस तेज तेज कदमों से घर पहुँचा। मम्मी ने खाना तैयार कर रखा था, पारस से खाना खा लेने को कहा। पारस खाना खाने बैठ गया। उसकी दृष्टि कमरे के कोने कोने का निरीक्षण करती रही। उसने कुछ उतावलेपन से ही खाना समाप्त किया। हाथ धोए। कुल्ला किया। वह अपने को रोक न सका और मम्मी से पूछ बैठा– "क्यों मम्मी ! चाचा जी तो नहीं आए थे ?"

मम्मी उसके पूछने का मतलब समझ गई। बोली– "इतनी जल्दी कैसे आते। अभी तो दोपहर ही हुई है। पहले उनके पास देहरादून से टेपरिकार्डर आएगा। फिर जब वह अपनी ड्यूटी से छुट्टी पाएंगे, तभी तो यहॉ आ पाएंगे।"

बात साधारण थी। पारस की समझ मे आ गई। फिर भी उसने मन ही मन कहा– ओह शाम तो बहुत देर से होगी। कब होगी शाम। और कब चाचा जी आएंगे, टेपरिकार्डर लिये हुए। नया नया, चमचमाता हुआ, अच्छे अच्छे गाने और धुने सुनाने वाला टेपरिकार्डर।

अपना मन दूसरी ओर लगाने के लिए पारस, पढने को बैठ गया। वह पढता रहा। खूब पढता रहा। संध्या होने मे अब भी देरी थीं, वह दरवाजे की हर आहट पर या हरे पर्दो के थोडे हिलने पर चौंकता रहा कि बस शायद अभी आए चाचा जी, अभी आए।

इस प्रकार संध्या भी हो गई, लेकिन चाचा जी नहीं आए। अब अंधेरा घिर आया। सात बज गए। आठ बज गए। पारस निराश होने लगा।

साढ़े आठ के करीब दरवाजे पर दस्तक हुई। बडी तेजी से पारस ने दरवाजा खोला।

चाचा जी नहीं थे। सामने कोई और आदमी खडा था। हाथ मे एक बडा-सा पैकिट लिये। वह भी मिल्ट्री ड्रेस में था। उसने पहले तो पारस को सैल्यूट मारा, फिर पैकिट आगे बढाते हुए कहा– "लीजिए, पारस बाबू। आपके लिए तोहफा। आपके चाचा जी को तो अचानाक आज ही किसी दूसरे मोर्चे पर जाना पडेगा। बिलकुल अभी।"

पारस का उत्साह जाता रहा। उसने उस कर्मचारी को अन्दर आने को कहा किन्तु वह अन्दर नहीं आया। बोला– "अभी बहुत काम है। साहब की तैयारी भी करानी है और उन्हें ट्रक पर बैठना है।" इतना कह कर वह दुबारा सैल्यूट लगाता हुआ चल दिया।

पारस भारी कदमो से कमरे में दाखिल हुआ। उसने पैकिट एक ओर मेज पर डाल दिया।

मम्मी के पूछने पर पारस ने सारी बात उन्हे बता दी। मम्मी थोडा थोडा सोने लगीं थी। अब उठ बैठी। पारस को निराशा से उबारने के लिए धीरे से बोली– "तो क्या हुआ। ऐसा तो फौजियों के साथ हमेशा होता ही रहता है। इन्हें चौबीसों घंटों कहीं भी जाने के लिए तैयार रहना पडता है। देश की सेवा करना कोई आसान काम नहीं।" पारस फिर सोच में पड गया तो उसे उत्साहित करने के लिए बोली– "अरे खोलो तो सही अपना टेपरिकार्डर। हम भी तो देखें।"

पारस धीरे से उठा। उसने प्लास्टिक के बडे थैले में से टेपरिकार्डर निकाला, जिस के ऊपर सुतली बंधी हुई थी और सुतली के साथ ही एक पत्र भी बंधा हुआ था। पारस ने पहले पत्र खोला और थोडा ऊँचे स्वर में पढने लगा ताकि मम्मी भी सुन सकें।

"प्यारे बेटे पारस!

आशीष। लो भई तुम्हारा टेपरिकार्डर तुम्हारे पास पहुँच गया। मुझे मालूम है, मेरे न आने से तुम्हे पूरी खुशी नहीं हुई होगी। तुम एक भावुक लडके हो। परन्तु किया भी क्या जा सकता है। मजबूरी है। हम मिलिट्री वालो का जीवन ही ऐसा है। साथ ही तुम यह भी समझ लो कि इन छोटी-मोटी बातो से हम लोग विचलित भी नहीं होते। हम लोग ऐसा जीवन जीने के अभ्यस्त हो चुके होते हैं। सच पूछा जाए तो इस मे हमे थोडा रस और आनन्द भी मिलता है कि हम लोग घर परिवार से ऊपर देश हित में जीते हैं। यह तो कुछ भी नहीं। हम सभी, राष्ट्र के लिए बडे से बडा बलिदान देने को सदा तत्पर रहते हैं।

तुम कतई निराश नहीं होना। चाहता तो मैं भी था कि तुम्हारे साथ इस नए टेपरिकार्डर का, हम सब मिलकर आनन्द लेते। मैं तुम से गानो, धुनो, फिल्मी, गैर फिल्मी गानो शास्त्रीय संगीत के बारे मे भी बात आगे बढाना चाहता था। परन्तु यह सब फिर कभी सही। अभी सिर्फ इतना कह दू कि जिन लोगो को शास्त्रीय सगीत सुनने या शास्त्रीय साहित्य पढने का अभ्यास हो जाता है (इसके लिए थोडा यत्न भी करना होता है) फिर उन्हे साधारण सगीत, उल्टे सीधे तुकबदी वाले गाने नहीं भाते। इन में कोई गहराई नहीं होती। इसी प्रकार अच्छा साहित्य ही जीवन के अधिक निकट होता है। मनुष्य के दु.ख-दर्द और समस्याओ का लेखा-जोखा करने वाला, कलात्मक साहित्य ही हमें संतुष्टि दे सकता है। यह भी सच है कि कला को समझने वालो की सख्या हमेशा कम ही हुआ करती है।

खैर। अभी तो तुम टेपरिकार्डर को बजाओ। आनन्द लो। यदि मैं शीघ्र लौट सका तो इन विषयो पर विस्तार से तुम्हारे साथ चर्चा करूगा। तुम एक समझदार लडके हो।

अगर तुम शीघ्र वापस घर लौटना चाहते हो तो, वही सिपाही तुम्हारी सहायता करेगा जो आप लोगो को यहाँ लाया था।

अपने मम्मी-पापा को मेरा प्रणाम कहना।

तुम्हारा चाचा
उपकार शर्मा

पत्र पढ कर पारस थोडी देर चुपचाप बैठा रहा। उसे पत्र बहुत अच्छा लगा। शायद टेपरिकार्डर से भी अच्छा। वह मन ही मन कह उठा– वाह ! मेरे चाचा जी कितने विद्वान हैं। दूसरों की कद्र करने वाले और सब का ध्यान रखने वाले।

मम्मी ने फिर से पारस को विचारों में खोया हुआ देखा तो बोली– "लगाओ न अपना टेपरिकार्डर। हम भी तो सुनना चाहते हैं। देर क्यो कर रहे हो। हरी अप।"

पारस ने धीरे से कहा– "पापा सो रहे हैं। उन्हें परेशानी होगी।"

"नहीं भई पारस ! सहसा पापा बोल उठे– हम अभी सोए नहीं। तुम्हारी सारी बातें सुन रहे हैं। तुम्हारे चाचा जी का इतना अच्छा पत्र भी सुना। अब गाने भी सुनेंगे। लगाओ लगाओ टेपरिकार्डर।'

इस से पारस बहुत प्रोत्साहित हो उठा।

उसने खुशी खुशी टेपरिकार्डर खोला। सचमुच टेप रिकार्डर बहुत ही सुन्दर था। उस पर लाल काले हरे रंगो की धारियॉ खिंची हुई थी।

वह न बहुत भारी था न बहुत हल्का। साथ के पैकिग में बहुत सारी कैसिटे थीं। एक पर बासुरी वादन लिखा हुआ था। वादक पन्नालाल घोष।

पारस ने सब से पहले यही कैसिट लगाई। बांसुरी की ऐसी लाजवाब धुन से वास्तव में वह बहुत प्रभावित और गदगद् हो उठा।

इसे थोडा सुनने के बाद, पारस ने और भी कुछ कैसिट्स थोडी थोडी सुनीं। फिर सब जने सुख की नींद सो गए।

दूसरे दिन शाम को पारस के वही पहाडी दोस्त आए। संतू, नेकीराम, केवल और भी कितने। पारस ने उन्हे बडे चाव से टेपरिकार्डर दिखाया और गाने सुनाए। कुछ धुनो पर वे सारे लडके खूब नाचे। कुछ ने स्वर मे स्वर मिलाए और बार बार बडी मस्ती से नाचते-गाते रहे।

फिर पारस ने बारी बारी से सब की आवाज, खाली कैसिट में कैद की। किसी ने पहाडी गीत गाया किसी ने चुटकुला सुनाया तो किसी ने छोटी लोककथा। इन सब को इस प्रकार आमोद-प्रमाद करते देख, पारस के पापा हंसते रहे। उनकी देखा देखी मम्मी भी मुस्कराती रही। परन्तु देर रात जब वे सब लौट गए तो मम्मी अपनी नाराजगी को दबा न सकी। बोली— "ये सब मीरासियों वाली ऊधम चौकडी मुझे पसंद नहीं। पारस अब तुम कल या परसो तक यहॉ से चले जाओ। और जा कर अपनी पढाई मे मन लगाओ। तुम्हारा यहॉ और रुके रहना ठीक नहीं। कल ही उस सिपाही से मिल कर, जाने की व्यवस्था करो।"

पारस ने बडे शांत स्वर में उत्तर दिया— "मैं अब बिलकुल छोटा नहीं हूँ। अकेला जा सकता हूँ। मैं कल अपने इन सभी मित्रों से विदाई लूंगा और परसों सवेरे वाली बस से चला जाऊँगा।"

❀❀

नई समस्या

पारस जब अपने घर का ताला खोल कर अन्दर घुसा तो वहॉ बहुत धूल गर्द जमी हुई थी। पारस ने झाडू से घर की धूल हटाई फिर पानी भर कर फर्श को साफ किया। नजदीक की दुकान से दूध लाया। चाय पराठे तैयार किए। बस यही थोडा नाश्ता किया। रात काफी हो चुकी थी। पारस ने अपनी पुस्तके-कापियॉ ठीक कीं ताकि सवेरे स्कूल जाते समय कोई मुश्किल न हो।

यहाँ आकर पारस को बहुत गर्मी सता रही थी। पहाडी और मैदानी इलाकों मे मौसम का बडा अंतर रहता है। उसने एक चारपाई आंगन में खींची। उस पर बिस्तर लगाया। और सो गया। उसे मम्मी और पापा की बहुत याद आ रही थी। साथ ही सफर की थकावट भी बहुत हो गई थी। इसलिए पारस को कब नींद आ गई, इसका उसे पता न चला।

सुबह ही सुबह मौहल्ले में बहुत शोर हो रहा था। इसी शोर शराबे के कारण पारस की नींद खुल गई। दो चार आदमी बहुत ऊँचा ऊँचा बोल रहे थे। पारस ने इस ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया और जल्दी जल्दी स्कूल जाने की तैयारी करने लगा। बिस्तर समेटा। बाथरूम आदि हो आया। रात के बचे दूध से चाय बनाने वाला ही था कि दुबारा वही शोर दुगना हो उठा। जैसे कुछ लोग आपस में लड रहे हो।

पारस घर से बाहर आ गया। सामने उसे किशन अंकल दिखे। किशन अकल ने भी पारस को देख लिया था। वे जल्दी से पारस की ओर बढ आए। पारस ने उनके पांव छुए। अंकल ने प्यार से सिर पर हाथ फेरते हुए पूछा– "कहो पारस बेटे कैसे हो ? आप सब लोग लौट आए ?"

"नहीं अंकल ! अभी तो मैं अकेला ही आया हूँ। पढाई में हर्जा न हो इसीलिए मम्मी ने भेज दिया है।"

"हूँ..." किशन अंकल कुछ कहते कहते रुक गए।

"बात क्या है– अंकल "पारस ने पूछा– "यह लोग झगड़ किस बात पर रहे हैं।" पारस ने एक अजनबी लम्बे आदमी की ओर देखते हुए पूछा– "यह कौन है।"

लम्बा आदमी एक मटमैली धोती-कुर्ता पहने हुए था। सर सफाचट था। वह बार बार हाथ ऊँचा उठा उठा कर सामने वालों को ललकार रहा था और कह रहा था– "हॉं हॉं सारे दोष गरीबों में ही होते हैं। जब जिस गरीब को चाहे आप लोग अंदर करवा सकते हैं। मगर देख लेना मैं भी किसी से कम नहीं। गांव से लठैत ला कर आप को हमेशा के लिए सबक सिखा दूगा।"

पारस ने अपना वही प्रश्न किशन अंकल के सामने दोहराया– "बताइए ना अंकल! आखिर बात क्या है ?"

किशन अंकल ने बताया, "कक्कड साहब की पत्नी ने माया रानी

को चोरी के जुर्म में कैद करा रखा है। यह लम्बा आदमी माया रानी का मामा है। इसे पता चला तो यहाँ आ पहुँचा। सभी लोग भी कक्कड साहब को समझा रहे हैं कि चलो मान लिया कि माया रानी से गलती हो ही गई। आखिर बच्ची है। तुम केस वापस ले लो। पर कक्कड साहब की मिसेज बडी अडियल औरत है। अब वह इसको अपने मान-प्रतिष्ठा का प्रश्न बना कर बैठी हुई, झगडा बढा रही है।"

यह सब सुन कर पारस को बहुत चोट लगी।

"अंकल, मैं माया रानी को अच्छी तरह से जानता हूँ, वह चोरी कर ही नहीं सकती।"

"सभी यही मानते हैं, अंकल ने कहा, पर यह कक्कड और इन की घरवाली मानें तब ना।"

"क्या मैं माया रानी से मिल सकता हूँ ?" पारस ने पूछा।

"हाँ क्यो नहीं। नजदीक ही चंद्रशेखर आजाद चौक के आगे, बाल सुधार गृह है। वह इस समय वहीं है। अब थोडी देर में कैदियों से मिलने का समय होने वाला है। शायद कल उसकी पेशी की तारीख है।"

किशन अंकल के चुप होते ही, पारस माया रानी के मामा के पास गया। उन्हें शांत किया।

एक तरफ ले जाकर उनसे पूछा– "आप ने अब तक क्या किया ?"

मामा ने बताया– "पुलिस वाले पैसे मांगते हैं। कहते हैं तभी वे कुछ मदद कर सकेंगे। पर मैं ठहरा गरीब आदमी। पैसे कहाँ से लाऊ ? यहाँ के कुछ लोग रहम दिल हैं। वे मुझे पैसे देने को तैयार है। पर मैं उन से भीख मे पैसा क्यो लूं ? सच तो यह है कि मैं इस तरह पुलिस वालों को कभी पैसे नहीं दे सकता।"

पारस बोला– "बिलकुल ठीक सोचा आपने, मैं एक बार माया रानी से मिल लूं। भगवान् चाहेगा तो सब कुछ ठीक ही होगा। आप निश्चित रहिए।"

इतना कह कर पारस अपने घर चला गया। जल्दी से सिर्फ एक प्याली चाय पी। फिर वह चन्द्र शेखर आजाद चौक की तरफ बढने लगा। आज स्कूल जाने का विचार उस ने छोड दिया। जहाँ इतने रोज छुट्टी मनाई आज और सही।

❁❁

माया रानी की आप बीती

माया रानी से मिल कर पारस को जो कुछ पता चला वह इस प्रकार है।

एक दिन माया रानी कक्कड साहब के मकान के लॉन मे बैठी गमलो की सफाई कर रही थी। मालकिन घर पर नहीं थी– अभी-अभी कहीं जरूरी काम से बाहर गई थी। घर के बच्चे स्कूल पढने गए हुए थे। मालकिन ने घर के आंगन का बाहर से ताला लगा दिया और माया से बोली मैं शीघ्र वापस आ जाऊॅगी। तब भीतर का काम करना। जब तक मैं लौटूं तुम इन गमलों की सफाई कर दो। इतना कह कर मालकिन अस्पताल की तरफ चली गई।

नल में अभी पानी आ रहा था। माया रानी ने एक पुराना मोटा कपड़ा लिया। उस से गमलो को पोंछ पोछ कर चमकाने लगी। गमलों के अन्दर से गर्द और फालतू पत्ते बाहर निकाले। कुछ नागफनी के पौधे थे जो बहुत बढकर ऊबड़ खाबड़ हो रहे थे। माया रानी ने उन्हे काटा-छांटा और फैंकने के लिए एक तरफ ढेर लगाने लगी। इतने में एक आदमी वहॉ तारों के किनारे आ खडा हुआ। वह आदमी कोई चालीस एक साल का होगा। वह साफ सुथरा पायजामा पहने हुए था। उसके चेहरे पर छोटी-छोटी दाढ़ी थी।

उसने माया रानी की ओर निहारते हुए पूछा– "छोटी मालकिन क्या आप यह नागफनी बेचेंगी ?'

माया रानी ने उस व्यक्ति को थोडा शंकित दृष्टि से देखा और चुप रही।

उस आदमी ने फिर से अपना वही प्रश्न दोहराया और कहा– "आपकी मर्जी है। माल आपका है। आपको इस के मुँह मांगे दाम मिल सकते हैं, छोटी मालकिन।"

अब की माया रानी ने थोडे साहस से उत्तर दिया– "मैं मालकिन नहीं नौकरानी हूँ। क्या ऐसी बेकार चीजें भी बिकती हैं ? आप चाहें तो बेशक ऐसे ही ले जावें।"

"बडी भोली हो गुडिया रानी ! इन से तो शहर के बडे लोगों के बगलो की शोभा बढती है। आप चाहे तो कुछ और पौधो की पनीरी

उखाड लें। और मेरे साथ चल कर देखें। बहुत पैसे दिलवा दूंगा। साथ ही और बहुत से खरीदारों से आगे के लिए परिचय करा दूंगा। फिर आपके पास पैसा ही पैसा होगा।"

ऐसी मीठी-मीठी बाते सुनकर माया रानी को थोडा लालच हो आया। वह नागफनी और दूसरे कुछ पौधे बालटी में समेटने लगी।

वह सोच ही रही थी कि उस आदमी के साथ जाए या न जाए। लेकिन उसी समय उस के दिमाग मे एकाएक बिजली सी कौंध गई। उसकी नजर बहुत दूर खडे मोटे ढाबे वाले पर पडी। और इसके साथ ही उस ने पहचान लिया। हो न हो, यही आदमी उन दो आदमियों मे से एक है, जो एक सुबह सवेरे उस गोरे-नाटे लडके को जबरदस्ती पकड कर ले जा रहा था। जिस लड़के की मदद पारस भैया ने पॉच रुपये अपनी जेब से दे कर की थी। पर हाय क्या हुआ होगा उस बेचारे का....

यह सब सोचते, माया रानी संभल गई। उसने अपनी घबराहट को छिपाते हुए कहा– "ठहरिए चलती हूँ। पर पहले जरा मालकिन को तो आ जाने दीजिए।"

इतने में एक दूसरा आदमी भी वहीं आ खडा हुआ। बोला– "त. त. बडी भोली लडकी हो। मालकिन भला इतनी कीमती चीजें तुम्हें बेचने देगी क्या ? उसके आने से पहले ही तुम्हें हमारे साथ चलना होगा।" कहते-कहते उसने माया रानी की बाहें पकड ली।

माया रानी जोर से चिल्लाई– "छोड दो मुझे। नहीं जाती मै तुम्हारे साथ।"

माया रानी की चीख-पुकार सुन कर मोहल्ले के दो तीन आदमी बाहर निकल आए। इतने में मालकिन भी दूर से आती दिखाई दी।

लोग जानना चाहते थे कि आखिर हुआ क्या है। परन्तु माया रानी घबराहट के मारे कुछ नहीं बोल सकी। उन आदमियों ने मालकिन के आते ही कहा कि यह आपकी नौकरानी चोर है। हमें यह पौधे बेचना चाहती थी।

"तुम लोग कौन हो। यहाँ क्या कर रहे हो ?" मोहल्ले के एक आदमी ने जरा सख्ती से पूछा।

इस पर वे दोनों यह कहते हुए वहॉ से खिसक गए– "भलाई का कोई जमाना नहीं। हम तो यूं ही जरा यहॉ से निकल रहे थे।"

माया रानी फफक-फफक कर रोती हुई मालकिन से चिपट गई।.

मालकिन ने माया रानी को सख्ती से अपने से दूर हटाते हुए डांट मारी– "चुडैल अब रो कर सच्ची बनती हैं चोर कहीं की। अब मैं तुझे काम पर नहीं रखूगी।"

माया रानी और जोर-जोर से रोती रही। दो एक आदमियो ने मालकिन को समझाया कि यह भी भला कोई बिकने की चीजें हैं। वे लोग तो शक्ल से ही बदमाश दिखते थे। परन्तु मालकिन नहीं मानी और माया रानी को कल से काम करने से मना कर दिया।

दसअसल मालकिन को इन दिनो अपने एक संबंधी को हर रोज अस्पताल देखने जाना होता था।

तीसरे या चौथे दिन की बात है। मकान पर कोई नहीं था। उसी तरह बच्चे स्कूल गए हुए थे। कक्कड साहब दफ्तर गए हुए थे और मालकिन अस्पताल। तब मकान मे चोरी हो गई।

मालिक और मालकिन पुलिस स्टेशन पर रिपोर्ट लिखवाने गए। पुलिस इन्स्पैक्टर ने पूछा– "क्या आप को किसी पर शक है ?"

मालकिन बिना ज्यादा सोचे फौरन बोल उठी– "माया रानी पर मुझे शक है।"

"कौन माया रानी ?" पुलिस इंस्पैक्टर ने पूछा।

मालकिन ने उत्तर दिया– "नौकरानी, जो हमारे घर का काम करती थी।"

"यह तुम एकाएक कैसे कह रही हो ?" कक्कड साहब ने आश्चर्य से पत्नी से पूछा। मालकिन ने बताया– "मैंने उसे काम से निकाल दिया था। इसलिए उसने शायद बदला लिया। एक बार बगीचे के पौधे भी बेचने की कोशिश कर रही थी।"

"हो सकता है। हो सकता है। हो क्यों नहीं सकता।" पुलिस इस्पैक्टर ने अपने स्टील की नोक वाला डंडा फर्श पर बजाते हुए कहा। उसी शाम को माया रानी को पुलिस गिरफ्तार कर के ले गई।

मोहल्ले के कई दूसरे लोगों ने पुलिस को बहुत समझाया कि माया रानी को हम अच्छी तरह से जानते हैं। वह यहां पिछले कई सालों से कई घरों का काम करती आयी है। कभी भी किसी को उससे कोई शिकायत नहीं रही। चोरी की बात तो बहुत दूर की चीज है। आदि–आदि।

परन्तु पुलिस वालो ने नहीं माना। कहा– "पुलिस तो अपने ही तरीके से जॉच करती है। वह निर्दोष होगी तो अवश्य छूट जाएगी।" इन्स्पैक्टर ने उत्तर दिया।

तब से सिपाहियों ने माया रानी को पकड कर बाल सुधार गृह मे डाल रखा है।

माया रानी की व्यथा-कथा सुनते-सुनते पारस की ऑखे गीली हो आई। पर उसने ऐसा प्रकट नहीं होने दिया। माया रानी तो पहले ही रो रही थी। पारस उस का मनोबल और नहीं गिराना चाहता था।

पारस ने माया रानी को ढांढस बंधाया। कहा– "बहन चिंता न करो। कल तो बाल अदालत में सुनवाई होगी ही । मुझे विश्वास है। आप अवश्य छूट जाएंगी। वैसे मै कोशिश करता हूँ। हो सकता है आप आज शाम तक ही घर आ जाएँ।"

जब से माया रानी यहाँ आई थी, पहली बार उसे पारस से स्नेह पाकर बल मिला। उसके चेहरे पर थोडी चमक उभर आई।

❀❀

कानून की जानकारी

माया रानी से मिलने के बाद पारस सीधा अपने मित्र रोहित के घर गया। रोहित, नरूला साहब का लडका था जो शहर के माने हुए वकील थे। रोहित नरूला, पारस से दो क्लासे आगे था। पर वह पारस को बहुत मानता था। उसकी प्रतिभा से प्रभावित था।

इतने दिनो बाद, अचानक पारस को अपने घर पर आया देख, रोहित बहत प्रसन्न हुआ। उसे ड्राइंग रूम में बैठाया और पूछा– "क्या हाल चाल हैं। आज सुबह-सुबह कैसे कष्ट किया ? मेरे लायक कोई काम हो तो बताओ ?"

पारस ने कहा– "मुझे आपके पिताजी से काम है। मुझे कृपया उनसे मिलवा दो।"

रोहित ने पारस को गौर से देखा– "अरे पारस तुम कुछ घबराए हुए लग रहे हो। पिताजी तो किसी दूसरे शहर गए हुए हैं। मुझे से कहो ना !"

"ओह !" पारस ने कुछ निराशा भरे स्वर में कहा– "तब क्या होगा ?"

"तुम अपनी बात तो कहो। "रोहित ने पारस के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा।

तब पारस ने धीरे-धीरे माया रानी वाली सारी घटना रोहित को बता दी।

पूरी बात जानकर रोहित ने कहा– "बस इतनी सी बात। यह कोई, खास मामला नहीं बनता। इस में ज्यादा पेचीदगी है भी नहीं। मैं जानता हूँ। बाल अपराधों के केसो का कैसे निपटारा होता है। पिताजी की वहॉ कोई जरूरत नहीं पडेगी। वहॉ अदालत मे तो कोई भी सिपाही वर्दी तक पहन कर नहीं आ सकेगा। घबराने वाली तो कोई भी बात है ही नहीं पारस जी।"

"वह तो बाद की बाते हैं। "पारस ने कहा– "अब क्या किया जा सकता है ?"

रोहित ने कहा– "मैं अभी तुम्हारे साथ चलता हूँ। दरअसल आम लोगो को कानून के बारे मे थोडी सी जानकारी भी नहीं होती। तभी वे जरा सी बात को एक बडी मुसीबत समझ लेते हैं। जब सब लोगों को माया रानी से इतनी सहानुभूति है तो वे तुरन्त उसी समय उसकी जमानत ले सकते थे। खामुखा उस बेचारी को तीन रोज से सुधार-गृह मे रहना पड रहा है।"

जब ये दोनों मित्र, माया रानी के मामा को साथ ले कर, बाल सुधार-गृह पहुँचे तो दोपहर हो चुकी थी। एक दो कर्मचारी रोहित को पहचानते थे। रोहित ने उन्हें बताया कि यह माया रानी के मामा हैं।

शायद पुलिस पहले से ही अन्दाजा लगा चुकी थी कि यह माया रानी बहुत ही गरीब घर की लड़की है। मामा को देख कर तो यह बात और पक्की हो गई कि इन से पैसे-पैसे कुछ नहीं मिल सकते। वैसे उन्हे माया रानी के विरूद्ध कोई गवाही और न ही कोई पक्का सबूत ही मिल पाया था।

अतः बडे इन्सपैक्टर ने अब बिना ज्यादा बहस किए माया रानी को छोड दिया कहा– "तकलीफ के लिए क्षमा करें। हमें अपनी ड्यूटी निभानी पडती है। आप लोगों को कक्कड साहब की चोरी का कोई सुराग मिले तो हमारी मदद कीजिएगा।"

"अवश्य अवश्य।" पारस ने कहा और सब लोग माया रानी को साथ ले कर, खुशी-खुशी लौट आए।

मोहल्ले में आ कर पारस ने रोहित को धन्यवाद दिया और कहा– "फिर कभी भी आपकी सहायता की जरूरत पड सकती है।"

"मैं हमेशा तैयार हूँ। "राहित ने पारस के कंधे पर थपकी देते हुए प्यार किया– "किसी बात की चिन्ता मत करना पारस।"

फिर रोहित अपने घर को चला गया।

पूरे मोहल्ले में यह खबर फैल गई कि माया रानी बिना किसी आरोप के लौट आई है। जो काम कोई भी नहीं कर सका, वह पारस ने कर दिखाया। मगर इस से कक्कड साहब की पत्नी जलभुन गई। किन्तु इतने लोगों का पारस की ओर झुकाव देख कर वह कुछ बोल नहीं पाई।

कुछ लोग आ आ कर पारस की पीठ ठोकते रहे। पूरा दिन इसी प्रकार निकल गया।

❀❀

आगा पीछा

दूसरे दिन स्कूल की छुट्टी थी। पारस सारा दिन अपनी कापी-किताबें ठीक करता रहा।

कृपाल, दयाल और नरोत्तम को भी पारस के लौटने का पता चल गया। वे तीनो मिल कर शाम को पारस के घर पर आ पहुँचे।

पारस अपने प्रिय मित्रों से मिल कर बहुत खुश हुआ और पूछा– "स्कूल मे आगे क्या-क्या पढाया जा चुका है। मैं तो बहुत पिछुड गया।"

किसी ने भी पारस की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। सब ने जैसे थोडी देर के लिए मौन धारण कर लिया।

पारस को कुछ शक हुआ कि जरूर कहीं कोई गडबड है। उस ने पूछा– "बात क्या है। आप सब एकाएक चुप क्यों हो गए ?"

तब कृपाल ने धीरे से कहा– "क्या बताएँ पारस। तुम्हारा नाम स्कूल से काट दिया गया है।"

"क्यो ?" पारस एकदम से चौंक गया।

"कैसे बताएँ ?" नरोत्तम कहने लगा– "बहुत लम्बी कहानी है, तुम्हारे पीछे बहुत सारे कबाडे हो गए।"

"मैं छुट्टी का प्रार्थना-पत्र तो दे गया था। फीस भी, दयाल तुम ने कहा था, मैं जमा करा दूंगा। फिर यह सब कैसे हुआ ?" पारस ने उसी चिन्ता भाव से पूछा।

दयाल ने बताया– "क्योकि एप्लीकेशन ज्यादा दिनों की छुट्टी की थी। इसलिए इसे लेकर मैं स्वय प्रिंसिपल के कमरे में देने जा रहा था। प्रिंसिपल साहब के कमरे के बाहर ही आहूजा सर मिल गए। पूछने लगे– क्या काम है प्रिंसिपल साहब से ?

मैंने बताया– पारस के पापा की तबीयत ठीक नहीं है। वह उनको लेकर बाहर जा रहा है। यह रही उसकी छुट्टी की एप्लीकेशन। इसे ही प्रिंसिपल साहब को देना है।"

"तो इसे प्रिंसिपल साहब को देने की क्या जरूरत है। क्लास टीचर को देनी चाहिए। लाओ अब मुझे ही दे दो। मैं अपने आप देख लूगा।" फिर एप्लीकेशन उन्होने मुझसे लेकर अपनी जेब मे रख ली।

फीस के दिनों मे जब मैं तुम्हारी फीस जमा कराने गया तो बोले– "कुछ फर्क नहीं पडता। जब पारस लौटेगा, तो स्वय दे देगा।"

इस तरह से एप्लीकेशन गुम कर के तथा फीस न मिलने का बहाना निकाल कर, उन्होने तुम्हारा नाम ही रजिस्टर से काट दिया है।"

दयाल चुप हुआ तो नरोत्तम कहने लगा– "पारस यह तो सीधी चार सौ, बीसी है। तुम्हारे पीछे हम लोगो की राम निगम के साथियो के साथ काफी हाथापाई हो ली। हर रोज किसी न किसी बहाने आ टकराते। झगडा करते और हाथ तक उठा देते। अब जरा तुम्हीं सोचो कोई कितना ही शांत तबीयत का हो। कब तक चुप रहेगा। मैं एक रोज अपने पिताजी को लेकर प्रिसिपल साहब के पास पहुँचा। प्रिंसिपल साहब ने बडे तपाक से पिता जी से हाथ मिलाया। शिकायत सुन कर हँसने लगे। फिर मेरे पिता जी से बोले– "कटारिया साहब। आप भी कौन से पचडे मे फँस गए। बच्चे हैं। लडते-झगडते हैं। फिर दोस्ती कर लेते हैं। हम लोग भी जब पढते थे ऐसा ही करते थे। क्या आप अपना जमाना भूल गए ?" कुछ इसी तरह की कई और मीठी-नमकीन बाते करते रहे फिर एक दफा पिता जी से हाथ मिला कर उन्हे वापस भेज दिया। मुझे उसी दिन से ही सदेह होने लगा था कि प्रिसिपल ही राम निगम गुट के लडको को उकसा उकसा कर हमे अपमानित करवा रहे हैं। फिर एक दफा तो, कॉलिज के लडके भी हमे मारने आ गए।

यह देखो कृपाल के सिर में अभी तक चोट के निशान है। हम सब ने भी जम कर मुकाबला किया था। राम निगम को भी काफी चोट आई थी।

तब से आए दिन हमारे विरुद्ध कोई न कोई कार्रवाई करने की चेष्टा करते रहते हैं। हम पर तो अभी पूरा बस चला नहीं। सब से पहले तुम्हें ही शिकार बना लिया। तुम्हारा नाम काट कर। कहते हैं यही पारस, इन सब का लीडर है।" यह सब सुनकर एक बार तो पारस सन्न रह गया– पापा कुछ कहें न कहे, मम्मी तो जरूर बिगडेगी। वह भी यही कहेगी, तुम बडे लीडर बने फिरते हो। सब का नेता बनने का, शौक पैदा हो गया है। अपना जीवन और भविष्य चौपट कर के छोडोगे।

पारस की परेशानी के भाव उसके मित्रो से छिपे न रहे। दयाल ने कहा– "चिन्ता न करो हम सब तुम्हारे साथ हैं। यदि तुम्हें स्कूल में वापस नहीं लिया तो हम भी स्कूल छोड देगे। आंदोलन करेंगे। ऐसी बात नहीं कि दूसरे लडके हमारा साथ न दे। ज्यादातर लडके तुम्हारे और हमारे पक्ष मे हैं। याद रखो, दुनिया में हमेशा, शरीफ और अच्छे लोगों की संख्या, बेईमानो और गुण्डों से बहुत ज्यादा होती है। कमी बस यही होती है कि वे संगठित नहीं हो पाते। अब की हमे हर तरफ से समर्थन मिला है। दूसरे बहुत सारे लडके भी इस शरारती टोली से बहुत तंग आ चुके हैं ? कहो क्या कहते हो पारस ? हमें तुम्हारा ही इंतजार था।"

पारस, दयाल की बात से बहुत प्रभावित हुआ। उसे बल भी मिला। एक बार तो मन मे आया कि चलो। निकल चलो। छेड दो आन्दोलन। देखी जाएगी। फिर उस ने अपने आप को थोडा काबू किया। सोचा– ऐसा आन्दोलन हमे ही कहीं गलत रास्ते पर बहा कर न ले जाए।

"तुम कुछ बोलो तो सही पारस।" पारस को एकदम गुम सुम देखकर नरोत्तम थोडा घबरा कर बोला।

पारस ने कहा– "इस से और कुछ हो या न हो, हम सब की पढ़ाई पर बहुत बुरा असर पडेगा।"

"सो तो ठीक है।" कृपाल ने कहा– "पर और कौन सा रास्ता है। कब तक हम शरीफ लडके, इन गुण्डो की धौस सहते रहेंगे।"

"तब ठीक है" पारस ने कहा– "पर एक बार हम यादव सर से सलाह कर लें तो ज्यादा अच्छा रहेगा। आप सब इस विषय मे क्या सोचते हैं।"

"क्या तुम कौशल यादव सर की बात कर रहे हो... पर वे अब हमारे स्कूल मे कहाँ है।" दयाल ने बताया।

"हाँ-हाँ उन्हीं की तो फिर, कहाँ गए सर ?" पारस फिर से घबरा गया, मैं सवा महीने के लिए बाहर क्या गया। पीछे सब इन्हीं दिनों में इतना उलट-पुलट होना था।"

दयाल ने कहा– "पारस ! परेशान क्यों होते हो। यादव सर हैं तो इसी शहर मे। प्रिंसिपल और उनके साथियों की अनीतियो के कारण उन्होंने त्याग-पत्र दे दिया।"

"बात क्या हुई थी ?" पारस ने पूछा।

नरोत्तम ने गम्भीर स्वर में कहा– "अब यह सब उन्हीं से पूछ लेना। वही तुम्हे सब कुछ विस्तार से बता देंगे। वे जैसी सलाह दें, हमे बता देना। अब तो बहुत देर हो चली है। हमे चलना चाहिए। घर वाले चिन्ता करते होगे।"

इस के बाद पारस के सभी मित्र चले गए।

❁❁

अगले कदम से पहले

पारस ने घडी देखी। लगभग नौ बजने वाले थे। मौसम में थोड़ी ठंडक बढ चली थी। पारस के मन में आया, क्यों ना अभी यादव सर के घर चल दू। मन मे, सब कुछ जान लेने की तीव्र इच्छा थी। आगे का कार्यक्रम बनाने की बात थी। स्वयं अपने भविष्य का प्रश्न था।

पारस अभी तक खाना नहीं खा पाया था। अपने खाने की उसे विशेष चिन्ता भी नहीं थी। एक तो यादव सर का घर बहुत दूर पडता था। शहर के दूसरे कोने में। दूसरे साइकिल पंक्चर पडी थी।

पारस ने सोचा सर के मकान पर पहुँचते हुए बहुत समय लगेगा। इस प्रकार वह उन्हे इतनी रात के समय परेशान नहीं करना चाहता था। अतः दूसरे दिन सवेरे उनके घर जाने की सोच कर, पारस ने कपडे बदले। फिर अपने लिए थोडा-बहुत खाना बनाया। खाना खा कर वह एक दफा जैसे सब कुछ भूल कर सो गया। किन्तु रात के किसी पहर में पारस की नींद खुल गई। वह फिर से, एक के बाद दूसरी घटनाओं पर सोचता रहा। अपने पापा के स्वास्थ्य के विषय में

भी उसका ध्यान बार-बार भटक जाता। इन सब विचारों के चलते उसे फिर, कब नींद आई, पारस को पता न चला।

सुबह जब पारस जागा तो बहुत देर हो चुकी थी। साढे आठ का समय हो रहा था। पारस शीघ्रता से तैयार हुआ। केवल एक कप चाय पीया, और यादव सर के घर की ओर तेजी से बढने लगा।

सर की पत्नी ने दरवाजा खोला।

पारस ने उन्हें बडे आदर से हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और कहा– "मेरा नाम पारस है। मुझे सर से मिलना है।"

"अच्छा पारस" उन्होंने बडे कोमल स्वर में कहा– "अन्दर आओ, तुम्हारे सर तो सदा तुम्हारी प्रशंसा करते रहते हैं। इस समय तो वे स्कूल चले गए हैं।"

पारस थोड़ी उलझन में पड़ गया। बड़े संकोच से कहा– "सुना है सर ने स्कूल छोड़ दिया है।"

"ठीक सुना है। परन्तु वह स्कूल छोडते ही, दो तीन अन्य स्कूल वालों ने उनको अपने यहाँ नौकरी करने का अनुरोध किया था। तीसरे ही दिन उन्होने एक स्कूल में जाना स्वीकार कर लिया था।"

"तब मैं फिर आऊंगा। शाम को किस समय सर घर पर मिलेगे ?" पारस ने पूछा।

"सांय चार बजे के बाद जब भी तुम आओ; मैं उन्हें रोक कर रखूंगी। पर तुम अन्दर तो आओ। थोडा जलपान कर के चले जाना।"

"बहुत बहुत धन्यवाद। अब शाम पाँच बजे मैं दुबारा आ जाऊँगा।" कहता हुआ पारस वहाँ से चल दिया।

रास्ते मे पारस सोचता रहा– सर की पत्नी भी कितने कोमल स्वभाव की महिला है। सर कितने अच्छे और होशियार हैं। हर जगह नौकरी मिलने की कितनी मुश्किल है। फिर मिली हुई नौकरी छोड़ने के लिए भी दम चाहिए। परन्तु यादव सर को एक नौकरी छोडते ही तीन तीन जगहो से नौकरी के प्रस्ताव आए। ओह ! हमारे सर कितने भले हैं।

दरवाजे का ताला खोल कर पारस ने पहले घर की सफाई की। फिर ढंग से अपने लिए नाश्ता तैयार किया। तब तक दिन काफी चढ गया था। पारस अपनी साइकिल ठीक कराने ले गया।

वापस घर लौट कर पारस, कुछ पत्र-पत्रिकाएँ देखने लगा। पारस

के यहाँ कुछ साहित्यिक और कुछ स्वास्थ्य तथा मनोविज्ञान से संबंधित पत्र-पत्रिकाएँ डाक से आया करती थीं।

दोपहर का खाना खा कर पारस थोडी देर के लिए लेट गया। उसी समय उसे अपने नए टेपरिकार्डर का ध्यान हो आया। उसका मन संगीत सुनने को मचलने लगा। लेकिन वह टेपरिकार्डर तो अपने साथ लाया नहीं था। मम्मी ने तो बहुत कहा था कि अपना टेपरिकार्डर तो अपने साथ लेते जाओ। पर पारस ने मना कर दिया था। उसने मम्मी को बताया था कि इन्हीं दिनों उसने किसी पत्रिका में एक लेख पढ़ा है जिस का शीर्षक था– "संगीत द्वारा स्वास्थ्य लाभ।" पारस ने मम्मी से कहा था कि पापा को जैसा संगीत पंसद हो, जब तब, उन्हें धीमी आवाज से सुनाया करें। इससे आप का मन भी बहलेगा।

पारस ने उठ कर मम्मी-पापा को एक पत्र लिखा। पापा के स्वास्थ्य का हाल पूछा। अपने सकुशल घर पर पहुँच जाने का समाचार दिया। और भी कुछ इधर-उधर के समाचार दिए। किन्तु अपने स्कूल से नाम कट जाने का जिक्र नहीं किया। सोचा इस से मम्मी-पापा को परदेस में और कष्ट होगा।

पत्र वह लेटर बॉक्स में डाल आया और सोचने लगा अब क्या करें। और किसी काम में मन नहीं लग रहा था। दिमाग में एक ही बात थी– पॉच बजे सर के घर पहुँचना। वह बार-बार अपनी कलाई घडी की ओर देखता रहा। पौने पॉच बजने की प्रतीक्षा करता रहा, जिससे ठीक पॉच बजे यादव सर के घर पहुँच सके।

परन्तु उस शाम सर से भेट नहीं हो सकी। वह स्कूल से आते ही ड्यूटी पर एक दो गॉवों का दौरा करने चले गए थे। सर की पत्नी ने यह सब बताया और पारस से परसों आने को कहा।

❀❀

सिद्धांत की बातें

यह दो दिन पारस ने बडी बेचैनी से काटे।

तीसरे दिन ठीक पांच बजे पारस यादव सर के घर पहुँचा। यादव सर अपने लॉन में खडे हुए मिले। वे भी बडी उत्सुकता से पारस की प्रतीक्षा कर रहे थे।

पारस ने सर के पांव छुए। सर ने झुके हुए पारस को बगल से पकड कर उठाया। सिर पर हाथ फेर कर प्यार किया और कहा– "कहो पारस कैसे हो। पहले तो अपने पापा का हाल सुनाओ।" कहते हुए वे उसे ड्राइंग रूम मे ले गए।

"वे पहले से बेहतर थे।" पारस ने बताया।

"तो क्या साथ नहीं आए। तुम अकेले आ गए। क्यों ?" सर ने कुछ आश्चर्य से पूछा। पारस को सर का यह प्रश्न थोडा चुभता हुआ सा लगा कि जैसे सर कह रहे हों कि मुसीबत के वक्त पापा-मम्मी को अकेला छोड कर ठीक नहीं किया।

पारस ने उन्हें बताया– "एक तो सवा महीना होने को हो आया था। पढाई के दिन थे। मम्मी-पापा को हरदम मेरी पढाई की चिन्ता लगी रहती थी।" इतना कहने के बाद, पारस चुप हो गया। सर समझ गए कि यह लडका बहुत परेशान हैं। इसलिए उसका साहस बढ़ाने के लिए कहा– "अच्छा पारस हमें यह बताओ। मसूरी में दिन कैसे गुजरे।"

पारस धीरे-धीरे सारी बाते बताने लगा। कोई बात भी नहीं छिपाई; बताया कि वहाॅ बहुत सारे बाल मजदूर बस अड्डों पर मजदूरी करते हैं। वे, सैर सपाटे पर आए देशी-विदेशी साहब लोगों की सेवा कर के थोडा पैसा कमा लेते हैं। मेरा उन लोगो के साथ थोडा उठना-बैठना मिलना-जुलना हो गया था। मम्मी को यह सब पसंद नहीं था।"

सर ने कहा– "पारस तुम्हारी मम्मी का सोचना भी गलत तो नहीं। इन छोटी आयु के बच्चो में भी बुराईयाॅ, जैसे– बीडी सिगरेट पीना या नशाखोरी करना प्राय. पाई जाती हैं। इनका प्रभाव तुम पर न पडे, यही उनका डर था। पर मैं जानता हूॅ तुम तो पूरे रामझदार लडके हो। और कहो ?"

इतने मे सर की पत्नी उन के लिए चाय-नाश्ता रख गईं।

"सर ! सुना है मेरा नाम स्कूल से काट दिया गया है।" पारस ने कहा– "हालांकि मैं छुट्टी का प्रार्थना-पत्र दे कर गया था। मेरे मित्र मेरी फीस जमा कराने को तैयार थे।" कहते-कहते पारस का स्वर रूंआसा हो गया।

"देखो पारस। घबराने से दुनिया के काम नहीं बनते। मैं मानता हूॅ, यह सब गलत हुआ है। स्कूल जैसी पवित्र संस्थाओं में भी अब बदमाशियाॅ होने लगी हैं।..."

सर की बात बीच में काटता हुआ पारस बोला– "मेरे साथी कहते हैं कि वे इस बात को ले कर आन्दोलन छेड़ेगे किन्तु आप से सलाह लेने के बाद।"

"अभी इस बात की जरूरत नहीं। यह सब तो केवल तुम्हें डराने के लिए प्रिंसिपल और आहूजा सर ने किया है। नई एप्लीकेशन देकर तथा थोडा जुर्माना यदि तुम भर दोगे तो वे तुम्हें वापस दाखिले से रोक नहीं सकते।"

"गलत बात के लिए मैं जुर्माना नहीं दूंगा। मैं ऐसे स्कूल में पढना भी नहीं चाहता।" पारस ने कहा।

चाय की चुस्की लेते हुए सर ने कहा– "तब ठीक है। मैं तुम्हें अपने नए स्कूल मे ले लूंगा। शायद वहाँ के प्रिंसिपल निगम साहब, चाहते भी यही हैं कि तुम स्कूल छोड़ दो। राम निगम उनका भतीजा है। थोड़ा होशियार भी है। पर तुम से ज्यादा होशियार नहीं। कहीं तुम मैरिट में उस से आगे न आ जाओ। यही उनको भय है।"

पारस यह सब सुन कर चुप हो गया। वह धीरे-धीरे चाय पीता रहा। सर आगे बोले– "यह सब बातें मैं तुम जैसे कोमल मन वाले बच्चों के सामने कहना नहीं चाहता था। पर चारा भी क्या है। आजकल बडे पद वालों के दिल बहुत छोटे हो गए हैं।"

"तब तो मेरे साथ मेरे कुछ दूसरे मित्र भी आप वाले स्कूल में आना पसंद करेंगे।" पारस ने सोचते हुए कहा।

"उन्हें हम अगले सत्र से ले लेंगे।" सर ने आश्वासन दिया।

"अच्छा सर एक बात और बताएं" पारस ने पूछा– "इस तरह हमारे स्कूल को छोड देने को उचित कहा जाएगा ? कि डर कर भाग गए।"

"पारस तुम सोचते तो ठीक हो। पर एक बात मैं तुम से कहता हूँ कि जहाँ तक हो सके एक बार, टकराव से बचना कोई बुरी बात नहीं। दुनिया क्या सोचती है, इस से बढकर हमारी साफ दृष्टि होनी चाहिए, जो अपने साथ साथ सबका भला-बुरा देख सकें। टकराव से हमारी पढाई का हर्जा होगा। आन्दोलनों के चक्कर मे मार-पीट तक की नौबत आ जाती है। मन हर समय फालतू चीजें सोच-सोच कर खराब होता रहता है।"

"अच्छा सर अब मैं चलूंगा।" पारस ने हाथ जोड़ते हुए कहा– "हाँ यदि आप बुरा न मानें तो एक बात और पूछता चलूं।"

"पूछो पूछो।" सर ने कहा।

"आप ने स्कूल से इस्तीफा क्यों दे दिया ?"

सर ने कहा– "ओह पारस ! तुम ने वही बात पूछ डाली, जिसे मैं टालना चाहता था। सोचता था कि मुझे ऐसी बातें बच्चों को बतानी भी चाहिए या नहीं.... मैं मानता हूँ कि बच्चो का मन-मस्तिष्क बहुत कोमल तथा संवेदनशील होता है। उनको ऐसी क्रूर बातें सुनकर बहुत ठेस पहुँचती है कि जिन्हें वे अपना आदर्श मानते हैं उनकी नीयत में ही खोट है। परन्तु अब मैं एक बात और भी सोचता हूँ कि बच्चों को सब कुछ समय पर ही मालूम हो जाना चाहिए कि यह भी सच है। कहीं-कहीं असली दुनिया कितनी सख्त चालाक और बेईमान भी हो सकती है। जिस धरती पर हम पैर रखते हैं वह हमेशा हरी दूब या फूलों की सेज नहीं होती। बहुत खुरदरी भी होती है। रास्ते सदा आसान सहज नहीं होते। ऊबड-खाबड़ भूल-भुलैयों और कांटों से भरे भी हो सकते हैं।"

थोड़ी देर के लिए सर रुके। उन्होंने पारस की ओर देखा। पारस का गोरा चेहरा अधिक गम्भीर दिख रहा था। चौड़े माथे पर स्पष्ट सलवटें पड रही थीं।

सर ने पारस के कंधे थपथपाते हुए कहा– "लेकिन इस में घबराने की जरा भी बात नहीं है पारस। ज्यादातर लोग तो हमारे जीवन में बहुत अच्छे आते हैं। फिर भी हमें अपने दुश्मन और मित्र को पहचानना आना चाहिए। रहना तो हमें इन सब के बीच में ही है ना !"

"हॉ सर ! यह सब बातें तो मैं और मेरे साथी भी सोचने लगे हैं। परन्तु क्षमा करे मैंने पूछा था– आप ने त्याग पत्र, क्यों दिया।"

"हॉ-हाँ।" थोडे ऊँचे स्वर में यादव सर हंसे– "मैं भी कहाँ बहक गया था। यही मेरी परेशानी है। मुझे प्रिंसिपल और उन की मण्डली के लोग अपने बच्चों को ज्यादा नंबर देने को मजबूर कर रहे थे। जो टेस्ट तुम दे कर गए थे, उसी की बात है। तुम्हारे सारे उत्तर सही थे। भला उन्हें मैं तुम से अधिक नम्बर कैसे दे सकता था। होते होते इन्हीं और ऐसी ही कुछ और बातों को ले कर मैंने त्याग-पत्र दे दिया।"

"ओह मेरे कारण ?" सहसा पारस के मुँह से निकला।

"नहीं पारस ! सिर्फ अपनी नीतियों के कारण। अब मुझे उस से अच्छा स्कूल मिला है। आओगे तो खुद ही देख लोगे।"

"अच्छा सर अब मैं चलूं। आपका बहुत समय लिया।"

पारस ने आज्ञा ली। अपनी साइकिल उठाई और घर की तरफ चल पड़ा। रह रह कर, सर के शब्द कानो में गूंज रहे थे– नहीं पारस, अपनी नीतियों के कारण। पारस सोचने लगा। सर कहते तो ठीक ही हैं। जब मनुष्य के जीवन मे कोई सिद्धांत ही न हो तो जीने का मजा भी क्या है। ओह यादव सर कितने महान् हैं। न तो झुके और न ही जरा घबराए। नौकरी छोड दी। दूसरी नौकरी पा ली। जैसे कोई खेल, खेल रहे हों।

⊛⊛

मुठभेड़

थोडा और आगे बढने पर एक चौराह पडता था। चारों ओर बहुत भीड थी। पारस ने साइकिल धीरे कर दी। चौराहे के एक कोने में पान की दुकान थी। वहाँ पर राम निगम तथा उसके चार पॉच मित्र खडे पान चबा रहे थे। उन्होंने पारस को देख लिया और रुकने के लिए कहा।

"कहो पारस कैसे हो ?" राम निगम ने स्वर को बहुत सहज बना कर पूछा।

"ठीक हूँ। आप सुनाइए।" पारस ने भी सहज भाव से उत्तर दिया।

"देख ही तो रहे हो। हम लोग तो खूब म ने मे हैं।" दूसरे लडके ने कहा।

"पान खाओगे।" राम ने पूछा।

"नहीं अब खाने का समय हो चला है। चलूंगा।" पारस ने एक कदम आगे बढाते हुए कहा।

"इस वक्त कहॉ से लौट रहे हैं जनाब ?" दूसरे लडके ने पारस को घूरते हुए कहा– "लगात है, यादव सर से मिल कर आ रहे हैं।"

पारस ने कोई उत्तर नहीं दिया।

तीसरे लडके ने पहले लडके की ओर देखते हुए कहा– "सुना है इन का नाम स्कूल से कट गया है।"

"अच्छा !" पहले ने जान कर आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा। फिर राम निगम की ओर देखते हुए कहा– "निगम साहब ! आप इन का नाम फिर से स्कूल में लिखवा दे ना।"

"अरे यह कौन सा मुश्किल काम है, हमारे निगम भैया के लिए। एक बार पारस खुद कहे तो सही।" चौथे ने कहा।

"अच्छा अब मैं चलूं।" कह कर पारस ने पैडल पर पैर रखा और गद्दी पर बैठ गया। पीछे से उसे जोर-जोर से हंसने की आवाजें सुनाई देती रहीं।

जैसे ही पारस अपनी गली में घुसा, उसके सामने माया रानी आ खड़ी हुई। धीरे से पूछने लगी– "पारस भैया इतनी देर से कहाँ चले गये थे।"

"कहो बहन ! ठीक तो हो। कुछ घबराई हुई लग रही हो। फिर से कहीं वही लोग तो नहीं आए थे। तंग करने।" पारस ने माथे का पसीना पोंछते हुए पूछा।

"नहीं नहीं। एक सिपाही आया था।"

"फिर से सिपाही।" पारस चौंका।

"नहीं, पारस भैया, वह सिपाही नहीं। मिलट्री का सिपाही। वहीं जो एक बार पहले आया था। घर पर ताला देख कर, बहुत देर तक इधर-उधर घूमघूम कर आपका इतजार करता रहा। बहुत देर हो गई थी। तब मेरे पूछने पर बताया कि फिर से आपके पापा की तबीयत खराब हो गई। घबराने की बात नहीं। इसीलिए उन्होंने तार नहीं भेजा कि बच्चा है। डर न जाए। परसों वह वापस जाएगा। आप बेशक उसके साथ चले जाना।"

"हूँ।" पारस सोच में पड गया।

"पारस भैया सिपाही कह रहा था। अब वे संभल गए हैं।" पारस चुप रहा तो माया रानी फिर बोली– "सुनो पारस भैया। चिन्ता मत करना। कहो तो मैं भी साथ चलूं।"

"नहीं नहीं, ऐसी कोई बात नहीं बहन। मैं कल सुबह की गाड़ी से अकेला ही चला जाऊँगा। वह सिपाही परसों आए तो बता देना। अब तुम भी आराम करो।" कहता हुआ पारस अपने घर चला गया।

❀❀

भाग-दौड़

रात के करीव आठ वज रहे थे। ठंड वहुत वढ गई थी। चारों ओर पूरी तरह से खामोशी छाई हुई थी। आस-पास के सारे पेड तन कर खडे हुए थे। जैसे चुपचाप ठंड से मुकावला कर रहे हो।

पारस सुनसान रास्ते को चीरता हुआ वडी तेजी से आगे वढता जा रहा था। उसने पीली धारियो वाला स्वेटर पहन रखा था। ऊपर जिप वाली वादामी जैकिट कसी हुई थी। हाथ में एक ब्रीफकेस झूल रहा था, जो हवा को झोंको से टकरा–टकरा कर सांय सांय की आवाज कर उठता। कभी कभी कोई पत्थर पारस के जूतों से टकरा जाता। ढलान की ओर लुढ़कता हुआ एक अजीव सी गूंज पैदा करता। फिर खामोशी छा जाती।

कुछ और आगे वढने पर पारस, एक मकान के सामने रुक गया।

दरवाजे पर धीरे से दस्तक दी।

एक लडके ने वडी फुर्ती से मगर विना अधिक आवाज किए दरवाजा खोल दिया, और एक तरफ हट कर खडा हो गया।

पारस वहुत ही उतावली मे था। दरवाजा किसने खोला, इस वात की तरफ वह ध्यान ही नहीं दे पाया। सीधा पापा की चारपाई के पास जा कर खडा हो गया। कुछ घवराए हुए स्वर में पूछा– "आपको फिर से क्या हो गया पापा।"

पापा धीरे से मुस्कराए। प्यार से पारस के सिर पर धीरे से हाथ फेरा। उसे तसल्ली दी– "कुछ भी तो नहीं मेरे बच्चे। पहले अपने दोस्तों से तो मिल लो। इन के रहते हमे कोई मुश्किल नहीं रही।"

पारस ने देखा नेकी राम और केवल नजदीक मूढों पर बैठे हैं। पारस लपक कर उधर ही बढ गया– "माफ करना मेरे अच्छे दोस्तो, मैं जल्दी से ठीक से देख नहीं पाया।" पारस ने उन दोनो से कस कर हाथ मिलाया और गले लग कर मिला।

दोनों ने पारस के कंधे थपथपाए– "चिन्ता मत करो। सब कुछ ठीक है।"

पापा फिर से बोले उठे– "हॉ यही तो मैंने तुम्हारी मम्मी से कहा था कि ऐसी छोटी-मोटी बातों के लिए तुम्हें परेशान न करें।"

पारस अब मम्मी के पांव छू रहा था। मम्मी, पापा की बात का उत्तर दे रही थी– "छोटी-मोटी बात थी क्या ? एक अजीब तरह का झटका लगा था। मैं तो बुरी तरह से घबरा गई थी।" मम्मी ने पारस को छाती से लगा लिया। "तुम्हारे इन्हीं सभी मित्रों ने हमे बचा लिया। अपने सारे काम छोड कर देहरादून भागे गए। जो जो इन्जैक्शन-कैप्सूल कंपाउंडर बाबू ने बताए थे, ले आए। साथ में एक बडे डाक्टर साहब को भी लिवा लाए। इस के बाद ही इन्होने कुछ चैन लिया। मगर चैन कहॉ, तब से बारी बारी से यहॉ ड्यूटी दे रहे हैं।"

पापा ने कहा– "सो तो है ही। अब और बाते फिर कर लेना। पहले इन सब के लिए चाय-नाश्ते का इंतजाम तो करो। फिर इन्हें आराम करने दो। बहुत बहुत परेशानी उठाई इन बच्चों ने। हॉ पारस ने तो खाना भी नहीं खाया होगा।"

पारस ने कहा– "मैंने रास्ते में खाना खा लिया था।" फिर पारस और उसके मित्र घुल मिल कर बातें करने लगे।

थोडी देर में मम्मी चाय-नाश्ता ले आई। वे सब खाते-पीते रहे। पारस नेकी राम और केवल से अपने दूसरे साथियो का हालचाल पूछता रहा। इन्हीं सब बातो में और बहुत सारा समय निकल गया।

"अच्छा पारस भैया। अब आप आराम करो। हम लोग कल मिलेगे।" कहते हुए नेकी राम ओर केवल चले गए।

नेकी राम और केवल के जाने के बाद मम्मी-पारस को बताया– "तुम्हारे यहॉ से चले जाने के बाद नेकी राम, केवल, संतू और दूसरे तुम्हारे मित्र बारी-बारी से हर रोज तुम्हारे पापा का हाल जानने आते रहते। कोई खास काम तो होता नहीं था। सच बताऊँ, मैं थोडे रूखेपन से बाहर से ही इन लोगो से बात कर के वापस भेज देती।"

"उस दिन अचानक तुम्हारे पापा की तबीयत ज्यादा बिगड गई तो यही सब एक दूसरे से बढ-चढ कर काम आए। अब मैं समझ गई कि अमीर लोगों से यही लोग कहीं अच्छे हैं। इनके जीवन मे जरा भी बनावटीपन नहीं है।"

"ठीक बात है, यह किसी को भी मुसीबत मे नहीं देख सकते।" पापा ने कहा।

बातें करते करते सभी सो गए।

दूसरे दिन, पारस डॉक्टर साहब से मिला।

डॉक्टर साहब ने बताया– "हम दोनों डॉक्टरो ने मिल कर अच्छी तरह से तुम्हारे पापा की जॉच कर ली है। वह अब पूरी तरह से ठीक हैं। उस दिन वाली घटना तो सिर्फ बदहजमी के कारण ही हुई। मैं बाहर था। मेरे न मिलने से कम्पाउंडर भी पशोपेश में पड गया। सभी घबरा गए और तुम्हारे साथियों को देहरादून भेज दिया। दूसरा डॉक्टर बुलाने। अब अच्छा यही है कि तुम इन्हें वापस अपने शहर ले जाओ। वहॉ अच्छे और बडे डॉक्टर हैं ही। महीने, दो महीने के बाद, दिखलाते रहना।"

पारस डॉक्टर साहब का धन्यवाद करने के बाद लौट आया। फिर अपने मित्रों से मिला। उनका भी धन्यवाद किया। उन्हें भी कभी शहर आने को कहा।

तब पूरी तैयारी करके मम्मी-पापा को साथ लेकर दूसरे दिन सुबह की बस से रवाना हो गया।

⊛⊛

सच का नाटक

पारस स्कूल पहुँचा। प्रार्थना-पत्र लिखकर स्कूल छोडने का प्रमाण-पत्र मांगा। क्लर्क ने प्रार्थना-पत्र पर अपनी टिप्पणी लिख कर उसे प्रिंसिपल साहब के पास भेज दिया।

प्रिंसिपल साहब कई फाइलें खोले बैठे थे। उन्होंने पारस को देखा पर बात नहीं की। बहुत देर तक बस फाइले ही फाइलें देखते रहे। पारस चुपचाप खडा रहा। अंत में पारस ने उनके सामने अपना प्रार्थना-पत्र रखकर कहा– "सर कृपया इस पर अपने हस्ताक्षर कर दीजिए।"

प्रिंसिपल साहब ने प्रार्थना-पत्र पढा फिर अनजान बनते हुए कहा– "अच्छा तो तुम पारस हो। क्या तुम्हारा नाम कट गया। ऐसी हरकते ही क्यो करते हो ? खैर हम तुम्हें माफ किए देते है। जुर्माना भर दो। तुम्हारा नाम फिर से लिख दिया जाएगा।"

"आप मुझे किस गलती के लिए माफ करते हैं। मैंने कोई ऐसी-वैसी हरकत नहीं की। मुझे अब इस स्कूल मे नहीं पढना।" पारस ने कहा– "मैंने ऐसी कोई भी गलती नहीं की जिसके लिए खेद प्रकट

करूं या जुर्माना भरूं। कायदे से आप मुझे इस स्कूल से निकाल भी नहीं सकते।" पारस के अन्दर गुस्सा भरा हुआ था जिस पर वह काबू नहीं पा सका।

"देखो पारस। ज्यादा मुँह नहीं लगो। तुम कभी हिन्दी के नाम पर तो कभी आदर्शवाद के नाम पर लड़कों को भड़काते हो। इस बात के लिए भी तुम्हें स्कूल से निकाला जा सकता है।" प्रिंसिपल साहब नाराज होकर बोले।

पारस ने उत्तर दिया– "मैं किसी को नहीं भड़काता। यहाँ के अधिकतर लड़के मेरे लिए आन्दोलन करने को तैयार हैं परन्तु मैं नहीं चाहता कि स्कूल की प्रतिष्ठा गिरे और लड़कों की पढ़ाई का हर्जा हो।"

"वाह ! यहाँ भी आदर्शवाद। लगता है कौशल यादव तुम्हें बहका रहा है। खुद भी बहक गया है, जो सरकारी स्कूल छोड़कर प्राइवेट स्कूल में जा लगा। सुना है प्रिंसिपल लग गया है। पर प्राइवेट स्कूल के प्रिंसिपल को कौन पूछता है। प्रिंसिपल साहब ने उसे कुरेदा, क्यों क्या कहते हो ?"

"मैं उनकी बात के लिए कोई उत्तर नहीं दे सकता।" पारस ने कहा– "वे खुद बहुत समझदार हैं। मैं अपनी ही बात कर सकता हूँ।"

प्रिंसिपल साहब चिढ़ गए– "यू गेट आउट।"

"अच्छा सर। मै जा रहा हूँ पर कल मेरा सार्टिफिकेट नहीं मिला तो चेयरमेन साहब ही मेरा सार्टिफिकेट लेने आएंगे।" कहता हुआ पारस चल दिया।

यह सब सुनकर प्रिंसिपल साहब तिलमिला गए।

उन्होने पारस को रोका– "सब ठीक है। तुम खुद अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारना चाहते हो तो रुको। तुम अभी अपना सार्टिफिकेट लेते जाओ।" कहते हुए उन्होंने मेज पर रखी घंटी बजाकर चपरासी को बुलाया और पारस को बाहर बैंच पर बैठ कर इंतजार करने को कहा।

पारस बाहर बैंच पर बैठा-बैठा कई तरह की बाते सोचता रहा कि आदमी अन्दर से गलत झूठा तो होता है। उसके मन में खोट चालाकी शैतानी भी भरी होती है। फिर भी बाहर से वह अपने आप को सच्चा रहम-दिल नेक-मिजाज दिखलाना चाहता। इसका मतलब यही हुआ कि उर्दू में जिसे जमीर कहते हैं या संस्कृत मे जिसे शाश्वत मूल्य

कहते हैं उसको कोई भी आदमी नकार नहीं सकता। यानी की सच की महिमा बहुत बडी होती है।

इतने मे चपरासी आया। पारस को सर्टिफिकेट देकर दूसरे कागज पर उसके हस्ताक्षर लिये।

⊛⊛

नए स्कूल में

दूसरे रोज से, पारस ने यादव सर वाले स्कूल में प्रवेश ले लिया।

पारस के पापा का स्वास्थ्य अब बहुत अच्छा हो चला था। धीरे धीरे पारस ने मम्मी-पापा को यह सारी बाते बतला दीं। पारस को डर था कि यह सुनकर मम्मी बिगडेगी। परन्तु मम्मी ने कहा– "पारस अब मुझे तुम पर पूरा भरोसा है। जो कदम भी तुम उठाओगे। सोच समझ कर ही उठाओगे। मुझे तो अब तुम्हारे मसूरी वाले मित्र भी बहुत याद आते हैं। अपनी सीमित आमदनी की परवाह न कर के हमारी मदद करते रहे। यहॉ मोहल्ले में भी लोग कहते हुए नहीं थकते कि तूने ही माया रानी जैसी अच्छी लडकी को छुडवाया है। मैंने उससे कह दिया है कि कल से हमारे घर का काम करेगी और पारस तुम उसे पढा भी दिया करना।"

मम्मी से ऐसी बाते सुनकर पारस का साहस बहुत बढ गया। उसने मन ही मन सोचा कि आगे भी अच्छे काम किया करेगा चाहे उस के लिए उसे कितनी ही तकलीफ क्यो न उठानी पडे।

तीन माह गुजर गए। मौसम में अधिक ठंडक आने लगी थी। सभी ने अपने-अपने स्वेटर निकाल लिये थे। स्कूल सात बजे की बजाय आठ बजे लगने लगा था।

उस वक्त कोई ग्यारह बजे का समय रहा होगा। यादव सर ने पारस को बुला भेजा।

वहॉ स्कूल के संचालक महोदय बैठे हुए थे। यादव सर ने उन से पारस का परिचय कराया। फिर पारस से बोले– "तुम्हें याद होगा, पुराने स्कूल में एक बार मैंने तुम से कहा था कि किसी गांव मे स्काउट कैंप लगेगा। उस मे बहुत से स्कूल भाग लेंगे।"

"जी सर, मुझे याद है।" पारस ने उत्तर दिया।

"यहाँ के लडको की तो हम ने काफी तैयारी करा दी है।" यादव सर ने आगे कहा– "तुम से इसलिए जिक्र नहीं किया कि पहले तुम अपना पिछला कोर्स पूरा कर लो। तुम होशियार लडके हो। मेरा ख्याल है कि अब तुम कैंप के लिए भी पूरी तैयारी कर लोगे। एक सप्ताह बाद यहाँ के सारे स्कूलो के बच्चे, साथ के गांव नैनासर में अपने-अपने टैंट लगाएंगे। कई प्रकार की प्रतियोगिताएँ होंगी। सांस्कृतिक कार्यक्रम होंगे। साथ ही गाँव की सफाई तथा वहाँ के लोगों को साक्षर बनाने (पढाने-लिखाने) का अभियान भी चलाया जाएगा।"

संचालक साहब ने पारस की पीठ ठोंकी और कहा–"तुम्हारे सर हमेशा तुम्हारी प्रशंसा करते रहते हैं। अपने स्कूल को सब से अधिक नम्बर और शील्ड मिलनी चाहिए।"

पारस ने सिर झुकाते हुए कहा– "सर मैं अपने साथियो से सब कुछ सीखने का यत्न करूंगा। वे सब तो मुझ से पहले बहुत कुछ सीख चुके हैं। हमें नम्बरों की चिंता नहीं करनी चाहिए। हम लोग केवल अच्छे से अच्छा प्रदर्शन करने का यत्न करेंगे।"

"शाबास शाबास।" संचालक महोदय ने पारस को अपने साथ सटाते हुए कहा– "बिल्कुल ठीक कहा तुम ने।"

उनके व्यवहार से पारस बहुत प्रभावित हुआ। एक प्रकार से पारस ने उनकी बात काट सी दी थी तो भी उन्होने बुरा नहीं माना बल्कि पारस को प्यार ही किया तथा उसका उत्साह बढाया। पारस को यह सोच कर खुशी हुई कि दुनिया में अच्छे लोगों की कमी नहीं है।

कैंप रीछ वाला और पगली औरत

नैनासर गाँव से जरा आगे बहुत लम्बा-चौडा मैदान पडता है। उसके आसपास भी बहुत से गाँव है। उसी मैदान मे देखते ही देखते, खूंटियों और रस्सियो के सहारे टैंट ही टैंट खडे हो गए। तब तक शाम घिर आई थी। उस धुंधलके में आस पास की झाडिया और छोटे बडे दूर-दूर तक फैले पेड बडे अद्भुद तथा मनोरम दिखलाई दे रहे थे। यदाकदा कोई पक्षी चहकता हुआ पास से गुजर जाता। लगता जैसे वातावरण मे मधुर गीत गूंज उठा हो।

थोडी देर बाद सभी को नाश्ते के लिए बुला लिया गया। नाश्ता कैंप के आयोजक (प्रबन्धक) डॉ. मनमोहन सिंह शहर से साथ लिवा लाए थे। मूंग की दाल के अंकुर और एक-एक सेब सब को दिया गया।

"कल से टोलियॉ बडी फुर्ती मिलजुल कर अपना खाना स्वयं तैयार करेंगी।" ऐसा निर्देश दिया गया।

फिर पारस ने एक राष्ट्र प्रेम का गीत गाया जो उसने स्वयं रचा था।

एक बुजर्ग मास्टर साहब थे लम्बे ऊँचे। उनकी सफेद और कुछ--कुछ काले बालों वाली लंबी दाढी थी। उन्होंने भूरे रंग की अचकन पहन रखी थी। वे धीरे धीरे नपे तुले कदमों से आगे आए, और मिर्जा गालिब की एक गजल गाकर सुनाई उनका स्वर बहुत सधा हुआ प्रभावित करने वाला था--

'गालिब' बुरा न मान जो 'वाइज' बुरा कहे
ऐसा भी कोई है कि सब अच्छा कहे सभी
न सुनो गर बुरा कहे कोई
न कहो गर बुरा करे कोई
रोक लो गर गलत चले कोई
बख्श दो गर खता करे कोई

इस शेरो-ग़जल के माहौल में तो जैसे सभी रंग कर खो गए। जैसे ही मास्टर साहब की लरजती हुई आवाज थमी। सभी के मुँह से 'वाह वाह' के स्वर सुनाई दिए। साथ ही सभी तालियॉ बजा रहे थे। पारस ने पूरे जोश में शायद सब से अधिक तालियॉ बजाई।

इसके बाद राम निगम और उसके साथियों ने एक लम्बा डिस्को डांस किया। इसे देखने के लिए आस-पास के गॉव के अनेक लोग आ पहुँचे। रह रह कर आग की रोशनी मे उनकी सुन्दर कलाई घडियॉ और गले में पडी सोने की जजीरे चमक उठती। वे सब डांस करते हुए बहुत ऊँचा कूदते। चारो ओर से तालियो की गडगडाहट गूज उठती।

इस नाच के बाद कोई और कार्यक्रम नहीं हुआ। रात के बारह बजने वाले थे। अत सभी लोग अपने अपने शिविरो मे सोने चले गए।

हर रोज नए से नए कार्यक्रमो का प्रदर्शन होता। परन्तु श्रमदान तथा गॉव वालो को पढाने का काम टोलियो मे हर रोज नियमित रूप से चलता।

पॉचवा दिन था। पारस, बच्चों-औरतों की एक टोली को पढा रहा था। तभी वहॉ एक लम्बी, बिखरे हुए बालों वाली औरत आ पहुँची। आते ही उसने पारस को भींच लिया– "आ गया मेरा चेतू। अरे तू कहॉ चला गया था, रे हाय मैं मर गई।"

इस औरत की ऐसी हरकत से पारस बुरी तरह से घबरा गया। उसके माथे पर पसीने की बूंदें उभर आई। उसने बडी मुश्किल से अपने को उस औरत से छुडवाया।

"ओह !" एक औरत ने आह भरी।

"पगली औरत है बेचारी। मास्टर साहब बुरा मत मानना।" दूसरी औरत ने पारस से कहा।

"क्या हो गया इसे ? लगता है कोई मानसिक चोट पहुँची है।" पारस के एक साथी ने निकट आते हुए कहा।

उसी औरत ने बताया– "हॉ इस बेचारी का लडका इसके लिए शहर से दवाई लेने गया था। तब से लौटा नहीं। अब जब भी कभी किसी गोरे नाटे लडके को देखती है, उसे अपना ही बेटा चेतराम समझने लगती है।"

यह सब सुनकर पारस का मन बहुत खराब हो गया। वह और नहीं पढा सका। वहॉ से उठ कर अपने टैंट की ओर चल दिया।

ज्यों त्यो पारस कदम आगे बढाने लगा, उसका दिमाग पीछे बहुत पीछे की बातें सोचे चला जा रहा था। एक तरह से वह पिछली तमाम यादों में उलझ गया। वही नाटा गोरा लडका। पुराना मित्र भगत राम और उसकी कहीं बातें। यादव सर, माया रानी के कथन।.... और बहुत कुछ, जिसे वह ठीक सिलसिले से, जोड नहीं पा रहा था। सिर भारी भारी होने लगा। उसे रह रह कर अपना कर्त्तव्य याद आने लगा।

तभी उसके कानो में डुगडुगी बजने की आवाज आई। सामने कुछ कुछ दूरी पर एक पीपल का बडा पेड था। उसके नीचे कुछ लोग घेरा बनाए खडे थे। पारस उधर ही चला गया। रीछ का तमाशा हो रहा था। चलो इसी से मन बहलाऊ। पारस ने सोचा।

लेकिन पारस के वहॉ पहुँचते पहुँचते भीड छटने लगी। तमाशा खत्म हो गया था। पारस ने एक रुपए का नोट रीछ वाले को दे दिया।

"तुम इस गॉव के तो नहीं हो ?" रीछ वाले ने पारस को गौर से देखते हुए जोडा– "शहर से आए लगते हो।"

"हॉ, आपने ठीक अनुमान लगाया।"

रीछ वाला पारस के इन थोडे से शब्दों से बहुत प्रभावित हुआ। उसकी धारणा थी, शहर के सभी बच्चे बडे अकडू होते हैं। बोला– "भले घर के लगते हो। कहो, "बाबू इधर कैसे आना हुआ ?"

"यहॉ इसी गॉव मे हमारा शिविर लगा है। बहुत से स्कूलो के लडके आए हैं।"

"बहुत, खूब ! हमे भी अपने स्कूलों और शिविर के बारे मे बताओ।"

पारस ने रीछ वाले की जिज्ञासा को समझा। उसे मोटे-सरल शब्दों में सारी जानकारी बडे रोचक ढंग से दी।

"बहुत खूब। बहुत खूब।" रीछ वाला बीच बीच में कहता रहा।

अपनी बात समाप्त कर, पारस बोला– "भाई साहब ! अब मैं आप से एक बात पूछं ?"

"क्यों नहीं। जो जी में आए पूछो। हमे कोई जल्दी नहीं। आपके लिए तो जितना कहो, रुक सकता हूँ। आप से तो पूरी दोस्ती हो गई।"

तब पारस ने उससे पागल औरत के विषय में पूरी जानकारी हासिल की।

रीछ वाले ने ऊपर बताई गई गॉव वाली महिलाओं की बात की पुष्टि की और बताया– "जब तक उसका लडका चेतराम नहीं मिल जाता यह औरत ठीक नहीं हो पाएगी। औलाद का कितना कष्ट होता है, अभी शायद आप नहीं समझ पाओगे।"

रीछ वाला, पागल औरत पर बहुत दया करता था। प्राय. अपने घर से उसे खाना खिलाता था।

सहसा पारस की नजर रीछ पर पडी जो एकटक उसकी ओर देख रहा था। उनकी बाते सुन रहा था।

पारस भालू से खेलने लगा– "तुम भी हमारे दोस्त बन जाओ। क्यों खेलोगे हमारे साथ।" भालू उछलने लगा।

"वाह कितना प्यारा भालू है।" सहसा पारस कह उठा– "भाई साहब कभी हमारे शहर भी लाइए ना इसे।"

"जरूर लाऊँगा बाबू। आप हुक्म तो करें। उसी दिन हाजिर हो जाऊँगा। हमारा काम तो शहरो मे तमाशा दिखाना है। गॉव मे तो बस कभी कभार मजमा लगाते हैं।"

"मैं आपको एक निश्चित तिथि और समय बातऊँगा। तब आप आना। मुझे आपकी सहायता की बहुत जरूरत है।"

"पक्का वायदा रहा दोस्त।" रीछ वाले ने तपाक से हाथ मिलाया। पारस ने रीछ से भी हाथ मिलाया और विदाई ली।

❁❁

डाका

आज रात फिर कैम्प-फायर हुआ था। खूब मस्ती भरा वातावरण था। नाच, गाने, खेल और चुटकुले। सभी प्रकार के मनोरंजनों से सब के मन खुशी से भर रहे थे। कुछ भावुक बच्चे बीच बीच में थोडी देर के लिए उदास भी हो उठते। क्योंकि उस गांव में कैंप की यह अंतिम रात थी। दूसरे दिन कैंप समाप्त होना था। फिर से शहर लौट कर पहले जैसा सामान्य जीवन जीना था। इस बात में कोई डर या खराबी नहीं थी। पढाई-लिखाई से ही तो बच्चों का जीवन बनता है। आगे चल कर वे बडे बडे काम करने में समर्थ हो सकते हैं। यह सब जानते समझते हुए भी बहुत से बच्चे इस कैम्प (के कुछ दिनों) में इतने रम गए थे कि उन्हें कैम्प छोडना अच्छा नहीं लग रहा था।

लगभग आधी रात गुजरने के बाद कार्यक्रम समाप्त हुए थे। सभी बच्चे एक दूसरे से, कैम्प के सफल और मनोरंजक कार्यक्रमों पर बातचीत कर रहे थे। साथ ही जो जो कमियाँ रह गई थी, उनकी ओर एक दूसरे का ध्यान दिला रहे थे। उन कमियों के कारणों को जान लेना चाहते थे ताकि ऐसी कमियां फिर न हों। तभी थोडी दूर से किसी टैंट से चीखने चिल्लाने और "बचाओ बचाओं" की आवाजें आने लगीं। साथ ही गोली चलने की आवाज भी सुनाई दी। इस से वहाँ का शांत वातावरण हिल गया।

पारस ने बड़ी फुर्ती से अपनी लाठी संभाली, अपने साथी लडकों से भी इसी प्रकार लाठी उठा कर बाहर निकलने को कहा।

बाहर हल्का हल्का चांद का प्रकाश फैल रहा था। तीसरी लाइन के पांचवें टैंट में, उन्होंने देखा- तीन चार आदमी टैंट में घुसते हैं और बाहर निकलते हैं। लडके चिल्लाते हैं। वे शायद लूट-खसोट और छीना-झपटी कर रहे हैं।

पारस ने बड़ी मुस्तैदी से अपनी लाठी के किनारों को अपने दोनों हाथो में तान कर पकड़ लिया और आगे बढ़ा। आगे और आगे। एक आदमी हाथ में कुछ पकड़े बडी तेजी से भाग रहा था। पारस ने वहीं बैठ कर अपनी लाठी उसके सामने तान दी। उस तेजी से भागते हुए आदमी की टांगें लाठी से टकराई और वह वहीं बुरी तरह से मुँह के बल जा गिरा। पारस के साथियों ने दो एक लाठियां उस पर जमा दी। इतने में सभी लड़के और अध्यापक वहाँ आ इकट्ठे हुए। उन्होंने उस आदमी को पकड़ लिया। और एक पेड़ के साथ बड़ी रस्सी से बांध दिया।

"ओह पारस भैया ! तुम ने मुझे बचा लिया। इस आदमी ने मेरी सोने की जंजीर और घड़ी उतरवा ली थी।" यह स्वर राम निगम का था।

बाकी दो आदमी दो लड़कों की घड़ियाँ लेकर भाग निकलने में सफल हो गए थे। "शाबाश पारस ! तुमने बड़ी हिम्मत दिखाई।" यादव सर पारस की पीठ ठोक रहे थे।

"नहीं सर ! मैं अकेला तो कुछ भी नहीं कर सकता था। मुझे तो अपने इन तीनों साथियों नवल, बच्चन और रूप का बहुत सहारा मिला, जो मैं आगे बढ़ सका। इन्हीं ने बाद में उसे भागने से रोका है।" पारस ने बडे विनीत स्वर में कहा।

सर राम निगम और उसके साथियों को बुरी तरह से धमकाने लगे– "तुम लोगों को शर्म नहीं आती। यहाँ समाज सेवा करने आते हो या ग्रामीणों पर अपनी अमीरी की छाप छोड़ने आते हो। इतनी कीमती घड़ियाँ और फिर यह सोने की चैनें यहाँ लाने की क्या जरूरत पडी थी। तुम लोग नाचते गाते बजाते थे तो तुम्हारी यह सब चीजें खूब चमक मारती थी कि नहीं ?"

राम निगम और उसके साथी पहले ही डरे हुऐ थे। सर की डॉट खा कर और गुमसुम हो गए। एक लड़का तो रोने लगा।

सर आपे से बाहर होकर बोले जा रहे थे– " गाँव में भी हर तरह के लोग होते हैं। डाकुओं की नजर भी तुम्हारी इन कीमती चीजों पर पडे बिना कैसे रहती। अब इस में हम अध्यापकों की भी बदनामी होगी और जो नुकसान हुआ है सो अलग।"

दो दो लड़कों की बारी बारी से ड्यूटी लगा दी गई जिससे वह आदमी भागने की कोशिश न करें। कुछ लड़कों को आसपास पहरा देने को कहा गया।

बाकी रात किसी की भी चैन से नहीं कटी।

दूसरी सुबह थानेदार और दो सिपाही आए। उन्होंने सब के बयान लिये। पारस की पीठ ठोंकी। थानेदार ने कहा– " बेटे तुमने हमारा काम बहुत आसान कर दिया। एक आदमी ही पकडा गया तो बाकी भी अब बच नहीं सकते। हमे इस गिरोह की कई दिनों से बहुत तलाश थी। हम तुम्हें राज्य सरकार से बहादुरी के लिए पुरस्कार दिलवाएंगे।"

⊛⊛

जिलाधीश से मुलाकात

शहर पहुँचने के तीसरे रोज कलक्टर साहब ने पारस को बुला भेजा। उसकी प्रशंसा की और कहा कि गणतंत्र दिवस पर हम तुम्हे पुरस्कार दिलवायेंगे।

पारस ने थोडा झुकते हुए कहा– "कलक्टर साहब ! आप की बडी मेहरबानी है। पुरस्कार मुझे नहीं चाहिए। यदि दिलवाना चाहते हैं तो मेरे दूसरे साथियों को दिलवा दें। उन्हीं के साहस से मुझे बल मिला। मैं अकेला भला क्या कर सकता था। आपने मुझे बुलवा भेजा। इसके लिए धन्यवाद। यदि आप मुझे नहीं भी बुलवाते तो मैं स्वयं आपके पास अवश्य आता। आपको शायद याद होगा। स्वतंत्रता दिवस पर आपने मुझ से कहा था कि कभी भी जरूरत पडे तो मेरे पास आना।"

"हॉ हॉ मुझे याद है। तुम वहीं पारस हो जिसने स्वतंत्रता दिवस पर इतना अच्छा भाषण दिया था। कहो मैं तुम्हारी क्या सहायता करूँ।"

तब पारस ने, उस नाटे गोरे लडके के गायब होने की बात बताई। इसी कारण से उसकी मॉ के पागल हो जाने के बारे में बताया। ढाबे वाले तथा उसके साथियों की बात भी कही। आते समय माया रानी तथा मंगतराम को भी पारस साथ लेता आया था। वे बाहर खडे थे। पारस ने कलक्टर साहब से अनुमति माँग कर, उनको बुलवाया। उन्होने भी अपने बयान कलक्टर साहब को दिए। जो कुछ मंगतराम जानता था, बताया। माया रानी ने भी अपनी आपा बीती सुनाई। साथ ही यह भी बताया कि कैसे वे आदमी उस गरीब गोरे नाटे लडके को घसीट कर ले गए थे।

उन दोनो के बयान ले कर कलक्टर साहव ने उन्हे भेज दिया। फिर काफी समय तक बैठे पारस के साथ सलाह मश्विरा करते रहे। पारस ने उन्हे अपनी योजना वताई। कलक्टर साहब ने अपने सुझाव रखे। तब कलक्टर साहब पारस से बोले– "इस मे संदेह नहीं कि हम जरूर सफल होंगे। मगर भारी जोखिम, तुम्हें ही उठाना पडेगा। बोलो तुम तैयार हो ?"

पारस ने निडर बच्चो की तरह उत्तर दिया– "कलेक्टर साहव, आप मुझ पर पूरा भरोसा रखे। आप आदेश तो दें।"

तब कलेक्टर साहब ने पारस से कहा– "यूँ नहीं यूँ...."
उनकी बात समझ कर पारस ने कहा– "अगर यूँ कर ले तो...."और इसी तरह धीरे-धीरे विस्तार से पारस से विचार-विमर्श करते रहे।

सारी योजना समझ कर पारस ने कहा– "मैं आपके हिसाब से कहीं भी कम नहीं निकलूंगा।"

❀❀

सच कहने का ढंग

पारस के जाते ही कलक्टर साहब, बहुत देर के लिए फोन पर व्यस्त हो गए। जाने किस को फोन पर फोन करते रहे। उस समय उन मे बडी स्फूर्ति थी। पारस को विदा करते समय उन्होने कहा था–"शुभकामनाएं पारस। फिक्र मत करना। और न ही घबराने की जरूरत है।"

पारस के पापा के स्वास्थ्य में बहुत सुधार हो गया था। अब वे धीरे-धीरे अपने दफ्तर भी जाने लगे थे। इस से पारस बहुत खुश था, वह मन लगा कर खूब मेहनत से पढाई मे जुटा हुआ था। परंतु इस सब के होते हुए भी वह कभी-कभी बहुत परेशान सा दिखने लगता। उसे लगता जैसे उसके सम्मुख गॉव मे घूमती वह पागल सी औरत बार-बार आ खडी होती है और पारस से सहायता मॉगती है। फिर से पारस को उस नाटे गोरे लडके का ध्यान हो जाता। अब तो पारस को उसका नाम भी पता चल गया था। चेतराम। न जाने वह कहाँ होगा। किस हाल में होगा ? यही सव सोचते-सोचते पारस व्याकुल और अशांत हो उठता। तब भी वह अपने को काबू मे रखता। वह किसी भी

सूरत मे नहीं चाहता था कि कोई भी उसके अंदर के भावो को भाप लें। उसकी परेशानी का कारण पूछे। यहॉ तक कि अपनी मम्मी-पापा तथा घनिष्ट मित्रो से भी उसने किसी प्रकार की ऐसी वैसी कोई बात नहीं की।

एक दिन, स्कूल से आते ही खाना खा कर पारस पढाई मे लग गया। आज स्कूल से कुछ अधिक काम मिला था। शाम हुई फिर रात हो गई, लेकिन पारस पढाई मे मग्न था। शाम की चाय तो मम्मी ने पारस को उसकी टेबल पर दे दी थी। अब वे बार-बार पारस को खाने के लिए बुला रही थीं।

"बस अभी आया मम्मी।" पारस हर बार कहता और फिर से पढने मे व्यस्त हो जाता। होमवर्क तो कब का खत्म हो चुका था। परंतु आजकल पारस पुस्तकालय से नई-नई ज्ञानवर्द्धक पुस्तकें भी ले आता था जो उसकी रुचि के अनुकूल होती। यथार्थवादी, सामाजिक उपन्यास, साथ ही ऐतिहासिक, राजनैतिक और कला पर आधारित पुस्तके उन मे प्रमुख होतीं।

इस समय पारस 'क्रांति-आंदोलन के कुछ अधखुले पन्ने' (लेखक –धर्मेद्र गौड) नामक पुस्तक पढने मे मग्न था। इस मे देश की आजादी पर मर मिटने वाले वीरों की अनेक प्रेरक कथाऍ थीं। इन्हें पढते-पढते पारस इतना भावुक हो उठता कि बार-बार ऑखें गीली हो जाती। किताब अपनी शैली में भी बहुत रोचक थी कि उसे छोडने को मन नहीं होता था।

फिर भी मम्मी के बार-बार कहने पर पारस उठा। पुस्तक के बीच एक कागज रखा। इस कागज पर, पारस पुस्तक के विषय में अपना मत व टिप्पणियॉ लिख रहा था।

पारस ने हाथ धोए। तौलिया लिया और खाने की मेज की ओर बढा। तभी दरवाजे की कुंडी बजने की आवाज आई।

पारस ने जल्दी से बढ कर दरवाजा खोल दिया। सामने राम निगम के दो मित्र खडे थे। उन्हे देख कर एक बारगी पारस चौंका, फिर बडे धैर्य से पूछा– "कहिए ! इस समय कैसे कष्ट किया।"

"पारस ! हमारे साथ चलो। जरूरी काम है। तुम्हें प्रिंसिपल साहब बुला रहे हैं।" एक लडके ने कहा।

पारस सोच में पड गया– "कौन से प्रिंसिपल साहब ?"

"अपने निगम साहब, आपके ~~सर्थ~~ पीछे वाली पिछली गली में उनके कोई मित्र रहते है, उन्हीं से मिलने आए थे। हम रास्ते में घूमते हुए मिल गए थे। हमीं ने उन्हें बताया कि पारस निकट ही रहता है। तो बोले –"बुला लाओ उसे। होनहार लडका है। हम उससे बात करेंगे।"

पारस फिर सोच में पड़ गया। एकाएक कोई निर्णय नहीं ले सका। धीरे से कहा–"ठीक है। सुबह उनके घर पर मैं स्वयं जाकर मिल लूगा।"

"अभी चलो ना पारस भैया। वे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। ज्यादा देर नहीं लगेगी।" दूसरे लडके ने पारस का हाथ पकडते हुए कहा।

मम्मी यह सब देख सुन रही थी। बोली– "हो आओ पारस, ज्यादा देर मत लगाना।"

मम्मी के कहने पर पारस बडी सतर्कता से उनके साथ चलने को तैयार होने लगा। पहले अपने कमरे में गया, कपडे बदले। चलने से पहले पेंसिलें छीलने तथा कागज काटने वाला चाकू अपनी पैंट की जेब में रख लिया।

पंद्रह मिनट गुजर गए। बीस मिनट गुजर गए। पारस नहीं लौटा। जब आधा घंटा गुजर गया तो मम्मी का धैर्य टूटने लगा। पारस के पापा पहले से ही सोने चले गए थे। मम्मी ने उ हें उठाया। सारी बात बताई कि इस तरह से पारस पिछली गली के किसी मकान तक गया है। अभी तक नहीं लौटा।

"कोई बात नहीं। देखता हूँ।" कह कर वे कपडे पहनने लगे।

पॉच सात मिनट में वे जैसे ही तैयार होकर बाहर निकलने लगे। उसी समय दरवाजे पर पदचाप सुनाई दी।

मम्मी ने आगे बढ़ कर बडी अधीरता से दरवाजा खोल दिया।

पारस के साथ प्रिंसिपल साहब, राम निगम और वही दो लडके खडे थे। पारस ने उन सब का परिचय अपनी मम्मी तथा पापा से कराया।

प्रिंसिपल साहब ने बडे तपाक से, पारस के पापा से हाथ मिलाया। हाथ जोडकर मम्मी का अभिवादन किया। बोले– "मैं आपका धन्यवाद करने आया हूँ। पारस ने अपनी जान पर खेलकर कैंप मे हमारे स्कूल के बच्चों की रक्षा की थी। वैसे कहना चाहिए ..." प्रिंसिपल साहब थोडा

अटके और आगे कहा– "दरअसल अपने ही पुराने स्कूल के साथियों की रक्षा की। अब मैं चाहता हूँ कि यह दोबारा अपने पहले स्कूल मे प्रवेश ले लें। इसने तो वहाँ कैंप में कितने इनाम जीते। वह अब दूसरे स्कूल के नाम गए। गलती से इसकी एप्लीकेशन और फीस हम तक पहुँची ही नहीं थी। इसने तो स्कूल ही बदल लिया।"

पारस के पापा ने उन्हें बिठाया। मम्मी उनके लिए चाय बनाने लगी।

प्रिंसिपल साहब ने फिर कहा– "पारस मेरी बात मान ही नहीं रहा था। इसीलिए वहीं बातों बातों में इतनी देर हो गई। फिर मैंने सोचा क्यों न मैं इस होनहार के पेरेन्टस् के दर्शन करता चलूँ।"

"आपने यहाँ पधार कर, बहुत कृपा की।" पापा ने कहा– "पारस अब खुद समझदार लड़का है।"

"यादव सर से सलाह किए बिना मैं कुछ नहीं कह सकता। सच्चाई तो यही है कि मैं यादव सर वाले स्कूल में ही पढ़ना चाहता हूँ।" पारस ने बडी विनम्रता से प्रिंसिपल साहब की ओर देखते हुए कहा।

"हम तुम्हारे यादव सर से भी प्रार्थना करेंगे कि वे भी वापस अपने पहले स्कूल में लौट आवें।" दूसरे लड़के ने कहा।

"हाँ हाँ । कल यही करेंगे।" प्रिंसिपल साहब ने उत्साहित स्वर में कहा।

चाय आ गई। सभी चाय पीने लगे। पारस ने चाय का चौथाई प्याला लिया। बस साथ देने के लिए। उसे अभी खाना खाना था।

चाय की चुस्की लेते हुए, पापा ने प्रिंसिपल साहब की ओर देखते हुए कहा– "निगम साहब ! चलो किसी बहाने आप यहाँ आए तो। बडी खुशी हुई। इस बहाने आपके दर्शन हो गए। आपको तो मैं और प्राचार्यो की तरह बहुत बडा समझता था। आप इतनी कम आयु में ही प्रिंसिपल बन गए।"

"मेरे नंबर हमेशा से ही बहुत अच्छे आते रहे। बी.एड., एम.एड. जल्दी कर लिया फिर सीधे चयन में पी.जी.टी. स्केल के लिए ले लिया गया। थोडी सर्विस के बाद ही प्रिंसिपल भी बन गया। आप जैसे बडों के आशीवाद से। परंतु आज एक बात मैं खुले रूप से स्वीकार करता हूँ।"

"बहुत खूब।" सहसा, पारस के पापा बोल उठे– "ऐसी कौन सी बात है ?"

"यही कि व्यावहारिक दृष्टि से मैं कुछ पिछड गया। मुझ में जल्दी प्रिंसिपल बन जाने के कारण अहंकार आ गया। मैं सभी कुछ अपने को ही समझता रहा। जो कोई मेरी हाँ में हॉ मिलाता उसे ही अच्छा मानता। पारस मेरे पास कई बार आता। स्कूल की कमियों को ले कर या दूसरे लडकों की समस्याएँ लाता। और मैं समझता कि यह नेतागिरी कर रहा है। या मेरे कामकाज में बाधा पहुँचा रहा है। इस पर कई बार पारस अकड भी जाता था।"

प्रिंसिपल साहब ने अपनी बात समाप्त की तो पारस के पापा ने कहा– "ऐसा तो होता ही है। इस में गलती पारस की भी है। छोटों को हमेशा अपनी सही बात भी बड़ी विनम्रता से कहनी चाहिए। बडे पद का व्यक्ति या अभिभावक यदि गलती पर भी हो तो उसे यह सहन नहीं होता कि कोई छोटा उन के कार्यों की खुल्लमखुल्ला आलोचना करें।"

"खैर अब तो हमें, पारस के साथ एक दोस्त जैसा व्यवहार करना होगा। स्टाफ मेम्बरों और सभी छात्रों के साथ हम बिना भेदभाव के पेश आएंगे।" प्रिंसिपल साहब ने कहा और उठ खडे हुए– "अच्छा फिर मिलेंगे।"

पारस और उसके पापा ने हाथ जोडकर उनका धन्यवाद किया। और उन्हें बाहर तक छोडने आए।

❀❀

जमूरा

आज नवम्बर की छः तारीख थी। हवा में ठंडक समाई हुई थी। साथ ही सुबह से ही रह-रह कर बूंदा-बांदी हो रही थी। बाजार और मोहल्लों में बहुत कम लोग दिखाई दे रहे थे।

शाम हो गई थी। थोडा अंधेरा भी होने लगा था। उसी समय ढाबे के निकट सहसा जोर-जोर से डुगडुगी बजने की आवाज सुनाई दी।

"रीछ वाला, रीछ वाला" कहते हुए बहुत से बच्चे ढाबे की ओर भागने लगे।

देखते ही देखते वहॉ पर छोटे-बडे और कुछ महिलाओं की भीड़ इकट्ठी हो गई। उधर से गुजरते हुए तीन चार सफेद कुर्ता पाजामा पहने आदमी भी वहीं रूक गए। तमाशा देखने।

रीछ वाले के पास तरह तरह के सामान थे। रस्सियाँ, तारें, मूढा, ढोलक आदि आदि। इन सब चीजो से हट कर, जिस तरफ लोगों का ध्यान जा रहा था वह था, रीछ वाले का जमूरा। वह बहुत ही अजीब तरह के रंग बिरंगे कपडे पहने था। सर पर एक नोकदार खूब लंबी टोपी चढा रखी थी। जमूरा बार बार टोपी को उतारता पहनता और मुँह को टेढा-मेढा कर के सब को हँसा रहा था। जैसे सर्कस का जोकर करता है।

"मेहरबानो, कदरदानो, भाइयो बहनो माताओ और बच्चो। सब थोडा सरक सरक कर बैठ जाएँ। तमाशा शुरू होता है, कहते हुए रीछ वाले ने जोर से डुगडुगी बजाई। गोलाकार चक्कर काटा। फिर आवाज को ऊँचा कर के बोला– "बच्चा लोग ताली बजाओ।"

दूर दूर तक तालियों की आवाज की गूंज सुनाई देने लगी।

रीछ वाले ने रीछ से कहा– "मेरे प्यारे रीछ भैया, अब तुम अपनी कुर्सी पर बैठ जाओ।"

रीछ थोडी दूर तक मूढे को पैरो से धकेल कर ले गया। फिर उस पर बैठ गया।

"अबे, पहले सब को सलाम कर।" रीछ वाले ने आदेश दिया।

रीछ जैसे कोई भारी गलती कर बैठा हो। वह बडी फुर्ती से उठ खडा हुआ और तपाक से सब ओर घूम घूम कर अगला पंजा उठा कर सलाम करने लगा।

सभी लोग हँसने लगे। बच्चे उठ उठ कर बाकायदा जवाब देने लगे– "रीछ साहब ! सलाम सलाम।"

"बैठ जाइए। बैठ जाइए। "रीछ वाले ने कहा– "अब आगे का तमाशा शुरू होता है।"

उसने दो बॉस गाडे। बीच मे रस्सा बॉधा। फिर रीछ से बोला– "साहब लोगो को अपनी निराली चाल दिखाओ।"

रीछ उछला। रस्सी से लटक कर एक सिरे से दूसरे सिरे तक आने जाने लगा। "खूब खूब। क्या कमाल है।" सफेद कुर्ता पाजामा पहने हुए आदमी ने कहा। एक रुपए का सिक्का उछाला और अपने साथियो के साथ जाने लगा। "नहीं मेरे बडे साहब, पूरा तमाशा देख कर जाइए। तभी पैसे दीजिएगा। अभी बहुत से बढिया खेल होने बाकी है।" रीछ वाले ने कहा।

इस पर बच्चे हल्ला मचाने लगे– "मजा आ गया, मजा आ गया। रीछ वाले भैया रीछ भैया। सलाम, सलाम।"

रीछ वाले ने सब को चुप कराया। और अपनी अपनी जगह बैठ जाने को कहा।

इस के बाद रीछ वाले ने कई और खेल दिखाए।

फिर रीछ से पूछा– "क्यो भई तू जमूरे से कुश्ती लडेगा ?"

बहुत नीचे तक सिर झुका कर रीछ ने कहा– "हॉ हॉ"
दस एक मिनट जमूरे और रीछ की कुश्ती चलती रही। बार बार जमूरे की लंबी टोपी दूर जा गिरती और जमूरा उसे उठा कर फिर से पहनता। अपने रंग-बिरंगे कपडो को झाडता। मुँह बिचकाता। रीछ उसे फिर से पछाड देता। इस पर बडे भी बहुत जोर से कहकहे लगा रहे थे।

इस के बाद रीछ वाले ने एक छुरा निकाल लिया और जमूरे की तरफ झपटा– "अब मेरे साथ लड।" इतना सुनते ही जमूरा जोर जोर से रोने लगा– "मैं नहीं लडूंगा।"

"अबे डरपोक की औलाद, लडेगा कैसे नहीं।"

"नहीं बाबा मुझे माफ कर दो," जमूरे ने हाथ जोडते हुए कहा– "यह तो बहुत खतरनाक खेल है।"

"अबे चल बे।" रीछ वाले ने जमूरे के एक ठोकर मारी।

"इसी छुरे से पहले भी तुम मुझे घायल कर चुके हो।" जमूरे ने सहमे स्वर में कहा।

"रहने दो यह खेल रीछ वाले। काहे को मारते हो बेचारे को।" एक औरत ने तरस खाते हुए कहा।

"ऐसे कैसे हो सकता है। ऐसे तो यह मेरा धंधा चौपट करा कर रहेगा। लडता है या नहीं।" रीछ वाला जमूरे की तरफ लपका। छुरा फिर से चमक उठा।

"बचाओ बचाओ।" कहते हुए जमूरा गोल घेरे को काटता हुआ ढाबे की ओर बढ गया।

ढाबे वाले ने उसे प्यार किया और बडी फुर्ती से उसे अंदर छिपा आया।

रीछ वाले और ढाबे वाले के बीच बुरी तरह से लडाई होने लगी।

रीछ वाला कह रहा था– "निकालो मेरे जमूरे को।"

ढाबे वाला उसे लंबा भाषण सुना रहा था– "शर्म नहीं आती,छोटे बच्चे पर जुल्म ढाते। भगवान से डरो।"

दो तीन और आदमी वहाँ आ गए, और ढाबे वाले की तरफदारी करते हुए रीछ वाले को धमकाने लगे– "जान की खैर चाहते हो तो भागते नजर आओ।"

रीछ वाले ने धमकी दी– "अभी एक घंटे के अंदर अंदर अपने लठैतो को ले कर आता हूँ। फिर देखता हूँ। कैसे नहीं छोडते इसे। मेरा जमूरा है, जैसा रखू, मेरी मर्जी।"

रीछ वाला अपना सामान समेटने लगा।

माया रानी यह सब देख सुन रही थी। वह सोचने लगी। वह लडका एक गलत जगह से भागा तो दूसरी गलत जगह आ फंसा। दो तीन आदमी जो ढाबे वाले की तरफदारी कर रहे थे, जिन्हें माया रानी पहले देख चुकी थी। इन्हे देखकर तो वह और घबरा गई। भागी भागी पारस के घर गई ताकि उसे पूरी घटना बता दे।

परन्तु, वहाँ माया रानी को पारस नहीं मिला। पारस की मम्मी ने बताया– "पारस तो दो रोज के लिए अपने सर के साथ बाहर गया हुआ है।" यह सुन कर माया रानी और भी घबरा गई। अब वह क्या करे। अंधेरा हो गया था। वह वापस थोडी आगे बढी थी कि उसे वही तीन आदमी मिले जो सफेद कुर्ता पाजामा पहने हुए तमाशा देख रहे थे। एक ने माया रानी से पूछा– "तुम इस समय बार बार इधर उधर क्यों आ जा रही हो।"

माया रानी रह न सकी। उसने कहा– "वह जमूरा गलत आदमियों के चुंगल मे फस गया है। वे उसे बहुत जल्दी कहीं और गायब कर देगे क्योंकि रीछ वाले ने कहा था कि वह घंटे भर में अपने आदमियों के साथ आएगा।"

"क्या तुम हमें बता सकती हो कि वे उस जमूरे लडके को किधर से ले जाएंगे ?" एक ने पूछा।

"ढाबे के पिछवाडे नीचे से होकर एक संकरी गली पडती है" माया रानी ने कुछ सोचते हुए कहा– "वहाँ से वह खुली सडक पर आ मिलती है। हो सकता है। उधर से ही वे लोग निकले।"

"अगर तुम उन लोगों को उधर से गुजरते देखो तो हमे इशारा कर देना।"

"हॉ मैं अपने वर्तन जोर-जोर से गिराने लगूगी।"

"विलकुल ठीक" एक ने कहा– "तव तक हम लोग चारो ओर निगाह रखते हैं।"

वही हुआ, जिस की माया रानी को आशका थी। वही दो आदमी जमूरे को घसीटते हुए उधर से निकले। जमूरा आ आ कर रहा था। उसके मुँह पर पट्टी वधी हुई थी।

माया रानी के हाथ से फर्श पर एक साथ सारे वर्तन गिर गए। वर्तनो की गूंज सुनकर, वडी फुर्ती से तीनो सफेद कुर्ते पाजामें वाले आदमी वहॉ पहुॅच गए। अंगुली के इशारे से उन्होने माया रानी को चुप रहने को कहॉ। खुद वहुत पीछे हट गए। वहुत दूर-दूर रह कर वे उनका पीछा करने लगे। एक दो वार जमूरा गिरा और छटपटाया और वापस कहीं भागने की कोशिश की लेकिन उन दो हट्टे-हट्टे आदमियों ने अपनी पकड मजवूत वनाए रखी। जमूरे की गर्दन को पीछे से पकड कर चोट पहुॅचाते ताकि वह और विरोध न कर सके।

और आगे वढने पर एक, अलग-थलग वहुत पुराना मकान नजर आया। वहॉ मकान के अन्दर दालान मे वहुत सा सामान ऊट पटांग तरीके से विखरा पडा था। उनमें से एक आदमी ने एक कोठरी का ताला खोला। फिर दोनो ने मिल कर, जमूरे को घसीट कर अन्दर धकेल कर वाहर से ताला लगा दिया।

जैसे ही वे वापस चलने को हुए, चारों ओर से सीटियॉ ही सीटियॉ वजने लगीं।

यह जो तीन आदमी सादे सफेद कपडो मे थे, इन्होंने ही पहले सीटियॉ वजाई थीं। यह लोग सी आई डी इंस्पैक्टर थे और साथ मे था, वही रीछ वाला। वह भी उतनी ही फुर्ती और मुस्तैदी से, अपने कपडे और रूप-रंग वदल कर, उनमे आ कर शामिल हो गया था। फिर और पुलिस वाले सीटियॉ वजाते हुए, पिस्तौले ताने वहॉ पर आ गए। उन्होने घेरा वना कर उन दोनों हट्टे-कट्टे आदमियो को हथकडी पहना दी। उनसे चावी छीनकर कोठरी का ताला खोला और जमूरे को वाहर निकाला। थैला अव भी उसकी पीठ से झूल रहा था। उसने ने झोले मे से टेपरिकार्डर निकाला। फिर उसमे से कैसेट निकाल कर पुलिस अधिकारी को दे दी। कहा– "इसमे इन लोगो के काले कारनामों की कथा इन्हीं की जवानी भरी है। मुकदमें मे शायद काम आए।"

पुलिस अधिकारी ने– "धन्यवाद" कह कर कैसेट सम्भाल कर रख ली। जमूरा जरा भी घबराया हुआ नहीं था, वल्कि उसके होठों पर हल्की हल्की मुस्कान थिरक रही थी। विजय की मुस्कान।

आस पास काफी लोग इक्ट्ठे हो गए थे। पुलिस के पूछने पर कइयों ने गवाही दे कर पुलिस से सहयोग करने का आश्वासन दिया।

अब जमूरे ने पहले अपनी लंबी टोपी उतार फैंकी। फिर धीरे-धीरे ऊपर के कुछ कपडे उतार दिय। नीचे वह साफ सुथरी सफेद कमीज और खाकी नेकर पहने हुए था।

इतने में वही भालू वाला भी वहाँ आ गया। जमूरा उस से लिपट गया– "भाई साहव आपने हमारी खूब सहायता की। किस प्राकर आप का धन्यवाद करूँ।" लोग उसे आश्चर्य से देख रहे थे। मगर उन मे से कुछ लोग तो जैसे खुशी से पागल हो कर बडे उत्साह से चीख उठे– "पारस पारस।" यह लोग पारस को पहचानते थे। अतः पारस पारस कह कर उसे कंधों पर उठा लिया।

उन दोनों हट्टे कट्टे आदमियों को पुलिस ले गई।

इतनी रात में भी चारों ओर इस घटना की खबर मिनटों में फैल गई।

जब ढावे वाले को पता चला कि उसके आदमी गिरफ्तार हो गए हैं। तो वह चुपके से एक अंधेरी गली मे आ गया और फरार होने की सोचने लगा। किन्तु यहाँ भी पुलिस पहले से सतर्क थी। उसने उस ढाबे वाले को भागने नहीं दिया। पकड़ कर हिरासत मे ले लिया।

मम्मी ने पारस को छाती से चिपका लिया। माया रानी ने पारस भैया कह कर उसके माथे पर विजय-तिलक लगाया। बडों ने पारस की पीठ ठोकी। लडकों ने पारस जिन्दाबाद के नारे-लगाए।

❀❀

आने वाले दिनों में

दूसरे दिन अखबार में यह सारी घटना विस्तार से छपी। पुलिस कमिश्नर ने बताया कि इस गिरोह की पुलिस को कब से तलाश थी। पारस को पुरस्कार मिलने की घोषणा की गई। साथ ही पारस का चित्र भी छपा। साथ भालू वाला भी वहाँ चर्चा का विषय बन गया। उसे भी पुरस्कार देने की बात कही गई थी।

दसवे दिन के अखबार मे इसी घटना की और जानकारी दी गई। पुलिस ने कई वच्चों को बरामद किया और उनके मॉ-बाप को सौंपा। यह गिरोह इन वच्चो से दूर-दराज के इलाको में भीख मंगवाता, चोरी करवाता और बेच तक देता। कहना न मानने पर उनके शरीर के अग तोड मरोड देता।

पारस, उस नाटे गोरे लडके चेतराम के बारे मे पुलिस से पूछता रहता। अतत चेतराम भी मिल गया। उसे एक बडे शहर में एक हलवाई के यहॉ से लाया गया। हलवाई ढाबे वाले का भाई था। वहॉ चेतराम को सुबह चार बजे से रात बारह बजे तक, लगातार हर प्रकार का काम करना पड़ता था। चेतराम बहुत कमजोर हो गया था। रो रो कर उसकी ऑखें लाल हो गई थीं।

चेतराम को उसकी मॉ के पास लाया गया। पगली माँ, बेटे को पा कर तथा डाक्टरों की सहायता से ठीक होने लगी। डाक्टरो दवाईयो और अच्छी खुराक का प्रबंध पारस ने कलक्टर साहब से कह कर करा दिया था। कक्कड साहब का चोरी का सामान भी पारस के बताने पर उसी मकान से बरामद कर लिया गया, जहॉ पारस को कोठरी में बद किया गया था। ढाबे वाले और उसके दो साथियो पर मुकदमा चला। माया रानी पारस तथा दूसरे लोगों की गवाहियॉ हुई।

पारस ने मन ही मन कहा– "चलो एक लम्बी यात्रा पूरी हुई।" परन्तु पारस की नीति हाथ पर हाथ रख कर बैठने की नहीं थी उसने सोचा जिन्दगी मे न जाने और कितनी यात्राएँ पूरी करनी हैं। यात्राओ का नाम ही तो जीवन है।

वह फिर से मन लगा कर पढने में जुट गया। सभी तो पारस से खुश थे– कक्कड साहब की पत्नी तक।

अब पारस के पास और भी विचारशील, साहसी व कर्मठ बच्चो का आना जाना लगा रहता।

मुकदमो मे समय लगता है। अंत मे जब माननीय न्यायाधीश ने फैसला सुनाया तो सभी अभियुक्तों को दंड मिला। मोटे ढाबे वाले तथा उसके दो साथियो को सात सात वर्ष की कठोर कारावास की सजा हुई।

❀❀

हरदर्शन सहगल

जन्म : 1935
कुदियाँ, जिला-मियांवाली
(अब पाकिस्तान में)

प्रकाशन

मौसम 1980, *टेढे मुंह वाला दिन* 1982,
मर्यादित 1990 *(कहानी संग्रह)*
गोल लिफाफे 1997 (व्यंग्य कथा सग्रह)
सफेद पखों की उड़ान 1984,
टूटी हुई जमीन 1996 (उपन्यास)
सही रास्ते की तलाश 1980, *अपने-अपने काम* 1985, *नाम कमाने की ललक* 1991,
पढाई का मैदान 1991 (वाल कथा सकलन)
सदाए अदब 1993 (शिक्षा विभाग राजस्थान के लिए उर्दू साहित्य का सम्पादन)
कुछ अन्य पुस्तकें प्रकाशनाधीन

पुरस्कार

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
सोवियत नारी मास्को,
चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली आदि-आदि

सम्प्रति

रेल विभाग से सेवानिवृत्ति
पश्चात स्वतत्र लेखन

सम्पर्क

5/ई/9 "संवाद"
डूप्लैक्स कॉलोनी, बीकानेर–334 003